

★ पात्रपरिचय ★

पुरुष

१. सूत्रधार ... नाट्यनिर्देशक ।
२. श्रीकृष्ण ... परमेश्वर, अवतारी पुरुष, राजा, नायक ।
३. नारद ... देवर्षि ।
४. धर्मदास ... द्वारपाल ।
५. धनञ्जय ... अर्जुन ।



स्त्री

१. नटी ... सूत्रधारक सहायिका ।
२. रुक्मिणी ... श्रीकृष्णक पटरानी ।
३. सत्यभामा ... श्रीकृष्णक छोटि रानी, मानिनी ।
४. सुभद्रा ... श्रीकृष्णक बहिनि, अर्जुनक स्त्री ।
५. मित्रसेना ... रुक्मिणीक सखी ।
६. सुमुखी ... सत्यभामाक सखी ।



श्रीः

उमापत्तुपाध्याय-विरचितं

पारिजातहरण-नाटकम्

मञ्जुलीतम्—१

जय जय मधु-कैटभ-अदिनि^१ । जय जय महिषासुर-भदिनि ॥
धूमर-नयन भसम-मण्डनि । चण्डमुण्ड दुहु शिर खण्डनि ॥
रक्तबिजासुर - संहारिणि । शुम्भ-निशुम्भ-हृदय-दारिणि ॥
सभ सुर शक्ति रूपधारिणि । सेवक सबहुक उपकारिणि ॥
अनुपम रूप सिंहवाहिनि । सबहि समय रहिहुह दाहिनि ॥
सुमति उमापति आशिष वानि^२ । सकल सभा जय करधु भवानि ॥

(नान्दो-दलोकः^३)

क्षोणी यस्य रवे भृगालक्षकलं मूलार्णवः पल्लवं
स्वर्गं द्वा वसनं विधाति, गगनं कस्तूरिका-लेपनम् ।

जय जगदम्ब ॥

मञ्जुलीतम्--१

अदिनि = भारनिहारि । भदिनि = नष्ट कर्णनिहारि । धूमर-नयन =
धूअक समान रंगक वा लाल ओ कारीक मिश्रणक रंगक (धूम) आंखि ।
मण्डनि = अलंकृत । दारिणि = विदीर्ण कर्णनिहारि । दाहिनि = अनु-
कूल । सुमति = सुमति = सुमन्त्री (उत्तम मन्त्री), सुबुद्धि ।

१ - 'क' 'ग' मे सभ चरणक दीर्घांत पाठ । खन्वक अनुरोधे दीर्घांत वा ह्रस्वा-
न्तपाठो उचित । परन्तु अन्तिमवर्ण से पूर्वक स्वरक गुरु उच्चारण अपेक्षित-
अदीनि, मदीनि, मण्दीनि । २ - 'क' 'ख' 'ग' वानो, भवानो । ३ - 'ख' नाम्नीपाठः ।

चन्द्रश्चाह-ललाटचन्दनमुद्धृष्यती गता माल्यतां
तेन श्रीधरणीधरेण हरिणा हिन्दूपतिः पाल्यताम् ॥१॥

अपि च,

यस्यास्व पूर्णचन्द्रः स्ववचनममृतं, दिग्जयश्रीश्च लक्ष्मी-
र्दोस्तम्भः पारिजातोः भूकुटिकुटिलस्य संगरे कालकूटः ।
तीव्रं चैजोऽग्निरोर्वः पदभजनपरा राजराज्यस्तटिन्यः
पारावारो गुणानाममुल-रसमयः पातु हिन्दूपति र्वः ॥२॥

(नान्द्यन्ते सूत्रधारः)

सूत्र० - अलमतिविस्तरेण । (नटी प्रति) आर्ये ! इहागम्यताम् ।

साम्नी (नाटकक आरम्भिक मञ्जुल पद्य)

अनिक दौत पर पृथ्वी कमल-नालक क्षण्डरूप मे, (पृथ्वीक) आधारभूत
समुद्र वभञ्चा (छोटकी पोखरि)-रूप मे, स्वर्गत मञ्जा (मन्दाकिनी) कपडा रूप
मे शोभित, आकाश कस्तूरीक लेपरूप मे, चन्द्रमा कनारक मुन्दर चामनक रूप
मे ओ ताराक पंक्ति मालारूप मे छहि-से पृथ्वीक चारण कएनिहार श्रीविष्णु-
भगवान् (वराहावतार), हिन्दूपति हरिहरदेवक रक्षा करथि ॥१॥

थाओरो—

अनिक मुँह पूर्णचन्द्र, अपन वचन अमृत, दिग्जयक शोभा लक्ष्मी,
स्तम्भ (खाम्ह) स्वरूप अहि पारिजातक गाछ, युद्ध मे भौँहक तनब विष,
तीक्ष्ण प्रताप वज्रवानल (समुद्रक आगि), धरणक सेवा मे लागल राजाक
समूह (राजी) नदीस्वरूप छथिन्ह से ई अनुलनीय रसिक, गुणक समुद्र (पारा-
वार) हिन्दूपति हरिहरदेव अही सभक रक्षा करथु । (एहि पद्यमे समुद्रक गुण-
सभक राजा मे आरोप करैत हुनका पारावाररूप मे चित्रित कएल गेल
अछि) ॥२॥

(नाट्यी-पद्यक अन्त मे सूत्रधार प्रवेश करैत छथि)

सूत्रधार—विशेष विस्तार (नाट्यी-पद्यक) कएनाइ उचित नहि । (नटीक प्रति)
आर्ये ! एम्हए जाउ ।

४ = 'क्ष' पारावारो गुणानाममुलपुनः पातु वो संभिलेशः ।

नटी—(प्रविश्य सूत्रधारं प्रति) आणवेहु अज्जो । [आज्ञापयत्वार्यः ।]

सूत्र०—आदिष्टोऽस्मि यवन वनच्छेद-कराल-करवालेन विच्छेद्यगत चतु-
र्वेद-पद्यप्रकाशक-प्रतापेन भगवतः श्रीविष्णो दशमावतारेण हिन्दु-
पति-श्रीहरिहरदेवेन, यथा उमापत्युपाध्याय विरचितं नवपारि-
जातमञ्जुलमभिनीय वीररसावेशं शमयन्तु भवन्तो भूपालमण्डलस्य ।
तद्ध गीयतां मञ्जुलम् ।

नटी—अहो भाअवेअं । [अहो भागधेयम् !]

(नाटक-रागे गीतम्—२)

सुरतरु घन उपवन करु मण्डप, वेदि रचल भल हिम-अचला ।

अपनहि आनन दान वचन भल, पुनि-पुनि पाउनि भवानि भला ॥

परमेसरा परमेसरा, जय जय सभ रस पेसरा ॥ध्रुवम्॥

नटी—(प्रवेश कए) आर्ये आज्ञा देख ।

सूत्रधार - यवनरूपी यनकेँ कटवा मे भवानक तहवारिस्वरूप, विभागयुक्त वा
कटल चारुवेदक मार्गकेँ प्रकाशित करबाक योग्य प्रतापवाला,
भगवान् विष्णुक दशम अवतारस्वरूप, हिन्दूपति श्रीहरिहरदेवक
आज्ञा भेटल अछि जे उमापति उपाध्यायक बनाओल नवीन पारि-
जात-मञ्जुल नामक नाटकक अभिनय कए केँ अहाँलोकनि राजास-
भक वीररसक आवेश (संचार) केँ शान्त करियन्ह । तेँ मञ्जुल
गर्वत जाउ ।

नटी—अहो भाग्य !

नाटक-राग मे गीत—२

सुरतरु = देववृक्ष (पारिजात) । घन = सघन । मण्डप = मड़वा (देव-
वृक्षक मण्डप यनओलनि) । वेदि = वेदी (विवाह मे बसिक बनाओल) । हिम-
अचला = हिमालय । आनन = मुँह से (अपनहि मुँह) भवानीक दान करबाक

चान-कला नयनान्तल थापल, मानल सुख भुजङ्गवरा ।
अमिछा-सार हवि अविरल होमल, हसल सकल सुर असुर नरा ॥
गाङ्ग भिजाए भाङ्ग भउ भोजन, सेज ओछाओल बाघछला ।
दीप समीप वरए फणि-मणिगण, देवि देव दुहु मने मिलला ॥
१भावे भगति भावित भव-भगवति, देधु सदा जय अभय वरा ।
भनधि उमापति सकल-नृपतिपति-हिन्दूपति प्रतिपालथु धरा ॥

नटी—(कर्ण दत्त्वा) अज्ज ! कीरिसो सो कलथलो ? [आर्य ! कीदृशोऽसौ कलकलः ?]

सूत्र—भगवान् श्रीकृष्णः सह रुक्मिण्या देव्या देवतोपवनमभिवर्त्तते, तदिह गत्वा पश्यावः । (इति निष्क्रान्ती)
(इति प्रस्तावना)

वाक्य वज्रैत छथि; लोक मे कन्यादाता वाक्य पडैत छथि, वर नहि) । पाउनि = पावनी (पवित्र कएनिहारि) । पेशरा = पेशल (निपुण) । चान-कला = चन्द्र-माक कला सँ औलिक (कपार परक तेसर) अग्नि-स्थापना कएलनि—विवाह मे हवन होइछ, काँसाक पात्र द्वारा अग्नि-स्थापना होइछ । एतए बानवला काँस्यपात्रक काज करैत छनि । सुख = खुश । भुजङ्गवरा = साँपकेँ । अमिअ = अमृत । हवि = वृत्त (चन्द्रमा सँ अमृत लए वृत्तक काज चलओरनि) । अविरल = अनवरत । होमल = होम कएल । गाङ्ग = गंगा से । फणि-मणि = सापक मणि । भाव भगति = भक्ति भाव । भावित = ध्यान कएल गेल । भव-भगवति = महादेव ओ पार्वती । जय अभय धरा = विजय ओ अभयदान वरदान देधु । नृपति-पति = राजाक ईश = राजाधिराज ।

नटी—(अकानि केँ) आर्य ! केहन ई हल्ला थिकैक ?

सूत्रधार—भगवान् श्रीकृष्ण रुक्मिणी देवीक संग रैतपर्यंतक उपवन दिश जाइत छथि । तेँ एतए जाए केँ-देखी ।
(दुहु बाहर जाइत छथि) ।
प्रस्तावना समाप्त ॥

(श्रीकृष्ण-प्रवेशकम्)

(मालव-रागे गीतम्—३)

कंस-केसि कुल मोचल, उग्रमेन देल राज ।
बदुकुल कएल निराकुल, तैओ बहुत अछ^० काज ॥
भूमिक भार उतारव, तारव^१ दानव लोक ।
धरम धरातल थापव, हरव साधुजन-शोक ॥
गरव हरव सुरराजक, काज करव सभे^{१०} जानि ।
भगत-भाव अवधारव, धरव परम पद आनि ॥
सकल-नरेश-मुकुटमणि, पटमहिषी - विरमान ।
हिन्दूपति रस-बिन्दक, सुमति उमापति भान ॥

(ततः प्रविशति श्रीकृष्णः, रुक्मिणी, सखी च ।)

श्रीकृष्णः—(स्वगतम्)—

भूमीभारनिवारणाय दुरितच्छेदाय शुद्धात्मनां
वैद्यार्थ-व्यवहारणाय च परित्राणाय धर्मस्य च ।

श्रीकृष्णक प्रवेशक गीत मालवराग मे—३

कंस-केसि = कंस ओ केशी नामक राक्षस । मोचल = मोक्ष देल (मारल) । निराकुल = शांत (उपद्रव-रहित) । अवतारव = हटाएव । तारव = सदगति देव । गरव = गर्व (अहंकार) । सुरराज = इन्द्र । भगत-भाव = भक्तिभावना । अवधारव = विचारव । पद = उचित स्थान । पटमहिषी = पटरानी । विरमान = विशेष अनुरक्त, तल्लीन । बिन्दक = पओनिहार ।

(तत्काल श्रीकृष्ण रुक्मिणी ओ सखी प्रवेश करैत छथि)

श्रीकृष्ण—(मनहि मन) वृक्षीक भार केँ हटाएवाक लेल, पवित्र व्यक्तिक भय केँ नष्टकरवाक लेल, वैदिक अर्थक व्यवहारक लेल, धर्मक रक्षाक लेल, देवताब्राह्मणक विद्वेषी दुष्टसभक धमण्डक शास्त करवाक

दर्पस्य प्रशमाय दुष्टमनसां देव-द्विजश्रोहिणां
ब्रह्मोद्गादि-मदक्षयाय च मया लब्धोऽवतारो भुवि ॥३॥

(प्रकाशम्) देवि ! दृश्यतां रैवतोपवने वसन्तशोभा ।
(श्रीकृष्णो रुक्मिणी सखी च गीतं गायन्ति १५ ।)

(वसन्त-रागे गीतम्—४)

अनगन्तित किशुक चारु चम्पक वकुल बकहुल फुल्लिआ ।
पुनु कतहु पाटलि पटलि नीप नेवारि माधवि मल्लिआ ॥
कर जोरि रुकुमिणि कृष्णसंग वसन्त-रंग निहारहीं ।
ऋतु रभस सिसिर समापि रसमय रमधि संग विहारहीं ॥
अति मञ्जु मञ्जुल पुञ्ज पिञ्जल चारु चूअ विराजहीं ।
निज मधुहि मातल पल्लवच्छले १२ लोहितच्छवि छाजहीं ॥
पुनु केलि-कलकल कतहु आकुल कोकिला-कुल कूजहीं ।
जनि तोनि जग जिनि १३ मदन-नृपमनि विजय राज सुराजहीं ॥

लेल ओ ब्रह्मा इन्द्र आदि देवताक मद (अहंकार) क नाश कर-
बाक लेल हम पृथ्वी पर अवतार लेल अछि ॥३॥

(सुनाए के) रैवत पर्वतक उपवन मे वसन्तक शोभा के देखू ।
(श्रीकृष्ण रुक्मिणी ओ सखी गीत गवैत छथि ।)

वसन्त-राग मे गीत—४

किशुक = पलाश । चारु = सुन्दर । फुल्लिआ = फुलाएल । पाटलि-पटलि
= पाँड़रि फूलक पंक्ति । नीप = नदम्ब । मल्लिआ = मल्लिका (चमेली) ।
रभस = बलजोरी । समापि = समाप्त कए । मञ्जु = सुन्दर । मञ्जुल-पुञ्ज
= सुन्दर डेर । पिञ्जल = पीयर । चूअ = चूत (आम) । पल्लवच्छले = नवीन
पत्रक लाये । लोहित = लाल । केलि-कलकल = विलास करैत गुनगुनाएव ।

११ - 'ख' 'ग' मे एहि पांतीक अभाव । १२ - पल्लवच्छवि ख ग । १३ - जिति-ख ग ।

नव मधुर मधुरस-१४ मुगुध मधुकर नीक-निक १५ रस भावहीं ।
जनि मानिनी १६-मन-मान-भञ्जन मदन गुण गुह गावहीं ॥
बह मलय निर्मल १७ कमल परिमल पवन उपवन सोहहीं १८ ।
ऋतुराज रैवत सकल देवत मुनिहु मानस मोहहीं ॥
यदुनाथ साथ विहार हरषित सहस-सोडह १९ नायिका ।
भन गुह उमापति सकल नृपपति होधु मङ्गलदायिका ॥

श्रीकृष्ण!—प्रिये ! विश्रम्भताम् । (इत्युपविश्य आकाशाभिमुखम्) अहो २०
आश्चर्यम् ॥

(नारद-प्रवेशकं वरारी २१-रागे गीतम्—५)

अवतर अवनी तेज २२ अकाश । न थिक दिवाकर, न थिक हुताश २३ ॥
धोतो धवल तिलक उपवीत । ब्रह्मतेज २४ अति अधिक उदीत ॥
वैणव दण्ड वेद कर शोभ । आवधि नारद दरसन-लोभ ॥

कोकिल-कुल = कोहलीक समुदाय । मधुरस-मुगुध = मधुक आस्वादन मे मुख ।
मधुकर = भौरा । मलय-परिमल = मलयाधलक सुगन्धि । ऋतुराज = वसन्त ।
रैवत = रैवत-पर्वत पर । देवत = देवता । यदुनाथ = श्रीकृष्ण । सहस-सोडह =
सोडह हजार ।

प्रिये ! मुस्ता लिख । (वेसिके आकाश दिस) आश्चर्य ॥

(नारदक प्रवेशक गीत मालव-राग मे—५)

अवतर = उतरलाह । अवनी = पृथ्वी पर । दिवाकर = सूर्य । हुताश =
अग्नि (आकाश से उतरैत नारदक तेज थिक अग्नि नहि) । धवल = उज्जर ।

१४ - सुम्भ-क । १५ - मधुकर कोकिला रस ख ग । १६ - मानिनीजन ख ग ।
१७ - मलय परिमल कमल उपवन मुगुध सौरभ सोहहीं-ख ग । १८ - सोहंजी - क ।
१९ - योद्ध - ख ग । २० - अहो (अभाव) ख ग । २१ - मालव - ख ।
२२ - तेजल अकाश - ख ग । २३ - हुताश - ख ग । २४ - तह - क ।

परम युगत तिनि जगतक हीत । ब्रह्माक^{१५} सुत, मोर शम्भुक भीत ॥
सुमति उमापति भन परमान । जगमाता देह^{१६} हिन्दूपति जान ॥

(ततो^{१७} रङ्गभूमिस्थले प्रविशति नारदः ।)

नारदः—(सहर्षम्^{१८})—

न शम्भुना वा न विरञ्चिना वा,
न योगिना यन्मनसापि दृष्टम् ।
तदद्य गोविन्दपरदारविन्दं,
विलोकयिष्यामि दृष्ट्वा कृतार्थः ॥४॥

(२६आसावरी-रागे गीतम्—६)

जाएब हरिक समाजे । पाओब^{१९} नयन-मुख आजे ॥

३१की आरे ॥ध्रुवम्॥

योगहु न जानिअ जन्ही । दिठि भरि देखब तन्ही^{२०} ॥
ब्रह्मा शिव सेव जाही । काहि भजब तेजि ताही ॥
भनहि भगति लेब माँगी । समय परब-पद लागी ॥

उपवीत = जनेउ । उदीत = उदित (प्रकटित) । वेंणव = वीणाक । युगत = युक्त (उपयुक्त) । तिनि जगतक = तीनू लोकक ।

(तखन मंचपर नारद प्रवेश करैत छथि)

नारद—(प्रसन्नता पूर्वक) जकरा ने महादेव ने ब्रह्मा आ ने योगी मनहुँ सँ देखने छथि ताहि श्रीकृष्णक चरण-कमल केँ आइ आँखि सँ कृतार्थ भए देखब ॥४॥

(आसावरी-राग मे गीत—६)

समाजे = सभा । दिठि = दृष्टि (आँखि) । विरमाने = विशेष अनुरक्त ।
पुनमत = पुण्यवान् ।

१५ - ब्रह्मासुत ख ग । २६ - बेसी - ख । २७ - रङ्गभूमिस्थले (अभाव) ख ग ।
२८ - मानसे कृष्ण दृष्ट्वा सहर्ष - क । २९ - नारदव्यागमनम् आसावरी रागे - क ।
३० - पाएब—ख । ३१ - (अभाव) ख । ३२ - तनी—ख ।

हिन्दूपति जिउ जाने । माहेसरि देइ विरमाने ॥
सुमति उमापति भाने । पुनमत^{३३} भज भगवाने ॥

(परिक्रम्य) अहो^{३४} ! इयं सत्यभामायाः सखी सुमुखी ।

सुमुखी—(प्रविश्य) अणुपेसिदह्नि देइए मच्चभामए, जहा एक्कते मं अज्जउत्तो सुमरेदि, तदो^{३५} ममिस्सं । [अनुव्रंषितारिष देव्या सत्यभामया, यथा एकान्ते माम् आर्यपुत्रः स्मरति, ततो ममिष्यामि ।] (नारदं प्रति) ब्राह्मणं नमामि, पृच्छामि अ, अहो ! नारदो वानरो वा भव ? [ब्राह्मणं नमामि, पृच्छामि च, अहो ! नारदो वानरो वा भवान् ?]

नारदः—भगवान्^{३६} नारदोऽहं, त्वं पूर्णकामा भव । मां वानरं भणसि ? तून्नेष कोपयथानुसारी ते वचनकमः ।

सुमुखी—(निरुध्य) भो^{३७} नारद ! अच्छरिअ !! दिव्यकइन्दो नारदो । [आश्चर्य ! दिव्यकवी(पी)न्द्रो नारदः ।]

(चूमि केँ) इथेहु तँ सत्यभामाक सखी सुमुखी छथि ।

सुमुखी—(प्रवेश कए) देवी सत्यभामा हमरा नियुक्त कएने छथि जे जखन एकांत मे आर्यपुत्र (पतिदेव श्रीकृष्ण) हमर स्मरण करथि तखन नहि जाएब । (नारदक प्रति) ब्राह्मण केँ प्रणाम करैत छी आ पुछैत छी जे अपने नारद छी कि वानर ?

नारद—भगवान् नारद छी हम। तोँ मनोरथ सँ पूर्ण होअहु । हमरा वानर कहैत छहु ? तखन तँ ई किसिअएवाक लेल तोहर बोल भेलहु अछि ।

सुमुखी—अओ नारद ! आश्चर्य, अपने तँ दिव्य-कइन्द छी। (प्राकृत मे कह शब्दक कथि ओ कपि (वानर) दू अर्थ होइत अछि । कइन्द सँ कवीन्द्र ओ कपीन्द्र बुझल जाए सकैछ ।)

३३ - पुनमत भज - ख ग । ३४ - अहो (अभाव) ख । ३५ - तहा—ख ।

३६ - पूर्णकामा भव—ख । ३७ - निरुध्य भो नारद (अभाव) ख ।

नारदः—दिव्यकपि अणसि ? सर्वथा श्लेषकुशलासि । कथय, कुत्र श्रीकृष्णः ?
सुमुखी—सन्निहिदो उजेव । [सन्निहित एव ।]

दीवारिको धर्मदासः—(प्रविश्य ३८) आज्ञापयति श्रीकृष्णः । पश्य सत्यभामायाः
पन्थानमिति ।

नारदः—दीवारिक ! श्रीकृष्णाय नारदं मां निवेदय ।

दीवारिकः—(श्रीकृष्णनिवृत्तं गत्वा) देव ! द्वारि नारदस्तिष्ठति ।

श्रीकृष्णः—सत्वरमानीयताम् ।

दीवारिकः—महर्षे ! उपसर्पतां देवः ३९ । (इति निवृत्तास्तः ।) (नारद उप-
सर्पति । श्रीकृष्णः प्रणम्य देव्या सह सम्पूज्य उपवेशयति ।)

नारदः—वंशवद्विरस्तु ।

श्रीकृष्णः—आमोदो विशेषेण जायते । किञ्चिदुपहृत्स्वयमानीतमस्ति ?

नारदः—दिव्यकपि (सुन्दर धानर) कहैत छह ? सब तरहें श्लेष-युक्त (एक
पदक अनेक अर्थ लेवा में) वाक्य ब्रजवा में पढ़ छह । कहह कतए
श्रीकृष्ण छथि ?

सुमुखी—लगहि मे छथि ।

दीवारिक—श्रीकृष्णक आज्ञा अछि जे सत्यभामाक बाट देखह ।

नारद—दीवारिक (द्वारपाल) ! श्रीकृष्णक लग निवेदन करह जे हम
नारद आएल छी ।

दीवारिक (श्रीकृष्णक लग जाए) देव ! द्वार पर नारद छथि ।

श्रीकृष्ण—अटदए लाबह ।

दीवारिक—महर्षि ! देवक समीप गेल जाओ (बाहर गेल) ।

(नारद समीप अवैत छथि श्रीकृष्ण अपन देखीक संग प्रणाम ओ
पूजा कए बसवैत छथिन्ह ।)

नारद—वंश बड्ढाओ ।

श्रीकृष्ण—महर्षि ! तीनू लोक में विचरण करैत अपने कोनो आश्चर्य (अ-
भुत बात वा वस्तु) कतए देखल अछि ?

३८—प्रविश्य (अभाव) छ ।

३९—उपसर्पतां देवम्—क छ ।

श्रीकृष्णः—महर्षे ! त्रिलोकसञ्चारिणा भयता किमाश्चर्यं कुत्र दृष्टम् ?

नारदः—भवचरितादन्वत् किमाश्चर्यम् ?

श्रीकृष्णः—आमोदो विशेषेण जायते । किञ्चिदुपहृत्स्वयमानीतमस्ति ?

नारदः—श्रीस्ते वक्षसि किं देव, वाणी चास्ये स्तुतिः कुतः ।

सिवब्रह्मादिसेव्यस्य, सेवका के तवेतरे ॥३॥

(आसावरी-रागे गीतम्—७)

तोहें हरि अन्तर्यामी । गुप्त करह किए स्वामी ॥

४० कि हरि हरि ॥ ध्रुवमा ।

सुरपति देल अमूले । पारिजात एक फूले ॥

तुअ पइ पूजय पाऊ । तेँ दरसन मने ४१ आऊ ॥

भगति दीअ ४२ जओँ पानी । से लेहे अमिअ सम जानी ॥

दीनबन्धु तोहें देवा । करय पार के सेवा ॥

सुमति उमापति भाने । पुनमत भज ४३ भगवाने ॥

हिन्दूपति जिउ जाने । माहेसरि देइ विमाने ॥

नारद—अपनेक चरित सँ आन कोन आश्चर्य अछि ?

श्रीकृष्ण—सुमन्धि विशेष रूपेँ लामि रहल अछि ! किछु उपहार (सनेस)
अननेँ छी की ?

नारद—लक्ष्मी अहाँक हृदये में छथि तेँ की दिअ, अहाँक मुँह में सरस्वती
छथि तेँ स्तुति की बरह, शिव ब्रह्मा आदि अपनेक सेवक छथि तेँ
आन के अपनेक सेवक भए सकैत अछि ? ॥३॥

(आसावरी-राग में गीत—७)

अन्तर्यामी—दीसराक मनक बात बुझनिहार । गुप्त—गुप्त । सुरपति
—इन्द्र । अमूले—अमृत्य । अमिअ—अमृत । विरमाने—विशेष अनुरक्त ।

४०—(अभाव) छ । ४१—सम-ख न ।

४२—जोख न । ४३—पुनमति भज ख न ।

(इति पुष्पं ददाति । श्रीकृष्णो गृहीत्वा सादरं पश्यति । सर्वे साश्चर्यं पश्यन्ति ।)

(सत्यभामा-प्रवेशकं मालव-रागे गीतम्—८)

सत्यभामा देवि देल परवेश । स्वामि सोहाग सोहाउनि वेश ॥
हरषित हृदय गरुष अभिमान । कृष्णविआरी प्राणसमान ॥
देखइत चानकलाक सँदेह । वसुधा वसु जनि विजुरी रेह ॥
मणिमय भूषण अङ्ग अमूल । कनक-लता जनि फूलल फूल ॥
सुमति उमापति कवि परमान । पटमहिषी देवि हिन्दूपति जान ॥

(ततः प्रविशति सत्यभामा, सुमुखी च ।)

सत्यभामा - सहि सुमुहि ! सच्चं सुमरइ अज्जउत्तो ? [सखि सुमुखि ! सत्यं स्मरत्यर्थपुत्रः ?]

सुमुखी—असच्चं देइए अग्गदो कहइस्सं ? [असत्यं देव्या अग्रे कथयिष्यामि ?]

सत्यभामा— (पञ्चम-रागे गीतम्—९)

सखिहे^{४४} रभसि रस चलु फुलवाड़ी ।
तहाँ मिलत मोर मदन मुरारी ॥

(ई कहि फूल दैत छविन्ह । श्रीकृष्ण फूल रूप के सादर देखैत छवि।
सभ आश्चर्य सँ देखैत छवि ।)

(सत्यभामाक प्रवेशक गीत मालवराग मे—८)

गरुष = गुरु (पेच) । वसुधा = पृथ्वी पर । विजुरी = विद्युत्क रेखा ।
अमूल = अमूल्य । कनक-लता = सोनक लती मे । सुमति = सुमन्वी ।

(तखन सत्यभामा ओ सुमुखी प्रवेश करैत छवि)

सत्यभामा - सखि सुमुखि ! की सत्ते आर्थपुत्र (पतिदेव) स्मरण करैत छवि ?

सुमुखी - देवीक आगू असत्य कहव ?

^{४४} - रभसि चलु-क ख ।

कनक - मुकुट ^{४५} - माणिक भल भासा ।
मेह - शिखर जनि दिनमणि - बासा ॥
सुन्दर नयन वदन सानन्दा ।
उगल युगल - कुवलय लय चन्दा ॥
पीत - वसन तन भूषण^{४६} मणी ।
जनि नवघन उर^{४७} घन - दामिनी ॥
वनमाला उर उपर उडारा ।
अञ्जन - गिरि जनि मुरसरि - धारा ॥
जीवन - धन - मन सरवस देवा ।
से लय करव हरिचरणक सेवा ॥
सुमति उमापति भन परमाने ।
जगमाता देवि हिन्दूपति जाने ॥

सहि सुमुहि ! उज्जअज्जाणे अच्चरिअ आमोदो । मए वि माहवी-
लदान्दरेण पेक्खमिह, अहा कि करेदि परोक्खे अज्जउत्तो । [सखि सुमुखि !
अद्य उद्याने आश्चर्यम् आमोदः । मयापि माधवी-लतान्तरेण प्रेक्ष्यते, यथा
कि करोति परोक्षे आमोदः ।] (इति तथा करोति ।)

सत्यभामा— (पञ्चम-राग मे गीत) — ९

रभसि = उत्कण्ठित भए । मदन-मुरारी = श्रीकृष्ण (कामदेव सन सुन्दर
मुरारि) । मेह-शिखर = सुमेरु पर्वतक चोटी पर । दिनमणि = सूर्य । युगल =
जोड़ा । कुवलय = कुमुदिनी । दामिनी = विजलोका । उर = छाती । वनमाला =
गरा सँ उहुन धरिक माला । उडारा = उदार (प्रशस्त) । अञ्जन-गिरि =
करिआ पर्वत । मुरसरि = गङ्गा । सरवस = सर्वस्व ।

सखि सुमुखि ! आह फुलवाड़ी मे अद्भुत सुगन्धि अछि । हमहूँ
माधवी-लताक दोग सँ देखैत छी जे परोछ मे श्रीकृष्ण की करैत छवि ।

(ई कहि तहिना करैत छवि ।)

^{४५} - मुकुट मणि भल भक ख ।

^{४६} - भूषण मणि-क ख । ^{४७} - नवघन उर दामिनी -क ख ।

श्रीकृष्ण—नारदः ! किमस्य पुष्पस्य माहात्म्यम् ?

नारदः—रूपं गन्धं रसं स्पर्शं नरो यो यं प्रतिच्छति ।

वाचितं तं तदा तस्मै सर्वं पुष्पं प्रयच्छति ॥१॥

सत्यभामा - अचचारिजं क्व पारिजातस्य पुष्पं ! का अण्णा जेट्ठदेइं परितेजिअ पाइस्सदि ? [आश्चर्यं खलु पारिजातस्य पुष्पम् ! का अम्या ज्ये-
ठदेवीं परित्यज्य प्राप्स्यति ?]

श्रीकृष्णः - (रुक्मिणीं प्रति) देवि ! गृह्यतामिदम् ।

रुक्मिणी - (प्रणम्य गृहीत्वा) महन्तो क्व एसो वसादो पतोः । [महान् ख-
श्वेष प्रसादः पश्युः ।]

सत्यभामा - जुत्तं एदं जेट्ठकुमारमाणाए । [युक्तमिदं ज्येष्ठकुमारमातुः ।]

सुमुखी - कथं जुत्तं ? परं देईं परोखे जिदिठ्ठा । [कथं युक्तम्, परं देवी
परोक्षे स्थिता ।]

रुक्मिणी - सहि मित्रसेने ! सम्भावेइं महस्सवम् । [सखि मित्रसेने ! सम्भा-
व्यं महो(धू)त्सवम् ।]

मित्रसेना - सहि ! सम्बधा कदव्वं, जइ देईं णचवइस्सदि । [सखि ! सर्वथा
कर्त्तव्यं, यदि देवी नत्तिष्यति ।]

श्रीकृष्ण—नारद ! एहि फूलक की माहात्म्य छैक ?

नारद—जै व्यक्ति रूप, रस, गन्ध स्पर्श ओ आहि जाहि पदार्थक इच्छा
करैत अछि, मडला पर ओहि व्यक्ति के ई फूल सभ किछु दैत
अछि ॥१॥

सत्यभामा—आश्चर्य थिक ई पारिजातक फूल !! जेठ रानी के छोड़ि आन
के एकरा प्राप्त कए सकैत अछि ?

श्रीकृष्ण - (रुक्मिणीक प्रति) देवि ! ई लिअ ।

रुक्मिणी - (प्रणाम कए, लट्ठ के) ई पतिदेवक महान् प्रसाद थिक ।

सत्यभामा - जेट्ठ कुमारक माएक लेल ई उचितै भेल ।

सुमुखी—कोना युक्त भेल ? परन्तु देवी (सत्यभामा) परोक्ष मे छी ।

रुक्मिणी - सखि मित्रसेना ! महान् उत्सव (वा वसन्तोत्सव) मनाउ ।

मित्रसेना—सखि ! सभ तरहेँ मनाएव, (यदि देवी रुक्मिणी) ताँची ।

रुक्मिणी - जइ आणवेदि पिअसही । [यथा आज्ञापयति प्रियसखी ।] (इति
तथा करोति ।)

(राजविजय-रागे गीतम् - १०)

आज^{४०} जन्म-फल भेला । सब-परिहरि^{४१}, हरि मोहि फुल देला ॥

पुजल पुरब हमे^{४२} गोरी । आसा तनि परिपूरलि^{४३} मोरी ॥

उपर रहल मोर साथे । सोइह सहस वरनारिक साथे ॥

सुमति उमापति भाने । ^{४३}माहेसरि देइ हिन्नुपति जाने ॥

सत्यभामा - सहि सुमुखि ! अदो वरं कि पेक्खिदव्वं, कि सुणिदव्वं ? तदो णिव-
ट्ठस्स । आवासं जेव्व गच्छम्ह । [सखि सुमुखि ! अतः परं कि
प्रेक्षितव्यं, कि श्रोतव्यम् ? ततो निवर्त्तस्व । आवासमेव
गच्छस्व ।]

सुमुखी - एवं ण जुत्तं देअं अदिठ्ठअ । [इदं न युक्तं देवमदृष्ट्वा ।]

श्रीकृष्णः - (एकान्ते^{४४} मनसि) कथं विनेया प्रिया सत्यभामा ?

सत्यभामा - अज्जवि पिआ-सइो सुणीअदि जेव्व । [अद्यापि प्रियाशब्दः
श्रूयत एव ।] (उपसृत्य सगद्गदम्) जअदि [जयति] (इत्य-
र्थोक्ते वाक्स्तम्भः । नारदं प्रणमति ।)

रुक्मिणी - प्रियसखीक जे आज्ञा । (ई कहि सहिमा करैत छधि) ।

राजविजय-राग मे गीत—१०

परिहरि = छोड़ि के । परिपूरल = परिपूर्ण कएलति ।

सत्यभामा - सखि सुमुखि ! एहि सँ आशु की देखब, की सुनब ? तैं खुड़ ।
परहि बल ।

सुमुखी—देव (श्रीकृष्ण) क बिनु दर्शनहि जाएब ठीक नहि हीएत ।

श्रीकृष्ण—(एकान्त मनसि प्रिया सत्यभामा के) कोना मत्ताएव ?

^{४०} - आज जनम मोर सुकलित भेला—ग । ^{४१} - परितेजिख न ।

^{४२} - हम खय । ^{४३} - परिपूरल-खय । ^{४३} - सुमति मनु भगवाने-खय ।

^{४४}—(अभाक) खय ।

नारदः - इदमिदं बहुमान्यतां गमिष्यसि ।

सत्यभामा - अज्जन्वि सा आशा ? (अद्यापि सा आशा ?)

श्रीकृष्णः - प्रिये ! इदमासनमास्यताम् ।

सत्यभामा - (सगद्गदाक्षरम्) अज्जउत्त ! दाणि ज्जेव सीरोवेक्षणा उप्पण्णा, तदो आवासं ज्जेव गच्छमिह । [आर्यपुत्र ! इदानीमेव शिरो-वेदना उत्पन्ना, तत आवासमेव गच्छामि ।] (इति सख्या सह निष्क्रान्ता ।)

रुक्मिणी - अज्जउत्त ! उण^{५४} भोजनं कदुअ ब्रह्मणा महस्सिणा पुणीअदु । [आर्यपुत्र ! पुन भोजनं कृत्वा ब्रह्मणा महर्षिणा पूयताम् ।]

श्रीकृष्णः - एवमस्तु ।

(ततो नारदेन सख्या च समं देवी निष्क्रान्ता ।)

श्रीकृष्णः - (स्वगतम्)^{५५} प्रत्यक्ष-विपक्षं मानसं कृत्वा सत्यभामा मां सन्तापयति । तथाहि-

सत्यभामा—एखनहुँ प्रियाशब्द सुनैत छी ? (लग जाए केँ गद्गद कण्ठ सँ) जय हो (आधे कहैत, बोल लड़खड़ाए रुक जाइत छनि । नारद केँ प्रणाम करैत छनि ।)

नारद—स्वामीक द्वारा बहुत मानल जाएय ।

सत्यभामा—आबहुँ से आशा ?

श्रीकृष्ण - प्रिये ! एहि आसन पर बैसू ।

सत्यभामा—(गद्गद कण्ठ सँ बजैत) आर्यपुत्र ! एखनहि माँथ मे दर्द ऊठि गेल अछि, तेँ धरहि जाइत छी । (ई कहि सखीक संग बाहर भए जाइत छथि ।)

रुक्मिणी—आर्यपुत्र ! महर्षि भोजन कैए केँ एहि घर केँ पवित्र करय ।

श्रीकृष्ण—एहिना हो ।

(तखन नारद ओ सखीक संग रुक्मिणी बहार जाइत छथि ।)

मालिन्येन मलीमसीकृतमुरः कम्पेन चोत्कम्पितं

मोहेन द्रवितं विलोचनजलैः श्वासैः पुनः शोषितम् ।

नि क्षिप्तं च सगद्गदेन वचसा काश्यप-वाराहौ

विश्लेषेण पुन मंदीय'हृदयं न्यस्तं हुताशे तथा ॥७॥

अन्वेषयामि तावदुपवन-लतासु । (परिक्रम्य) नूनं परित्यज्यैव गता प्रिया । तदावासमेव गच्छामि । (पुनः परिक्रम्य) इदं प्रियावासद्वारम्, इयं शिखिरोपचारव्यथा सुमुखी । पृच्छामि तावदेनाम् । (प्रकाशम्) सुमुखि ! प्रियायाः का वार्ता ?

सुमुखी - (प्रविश्य)^{५६} देव ! सेव्यं पुष्पं अन्नासं वासन्ती, सम्पदं ऊना देव्येण किदा । [देव ! सेव पूर्वमनायासं वासन्ती, साम्प्रतम् ऊना देवेन कृता ।]

श्रीकृष्ण—(मनहि मन) प्रत्यक्ष विरुद्ध मन कए केँ सत्यभामा हमरा दुखी बनाए रहल छथि । जेना कि—

हमरा हृदय केँ ओ मालिन्य (मनकेँ विकृत करबा) सँ मलिन कए देलनि अछि, छातीक कम्पन सँ कँपा देलनि अछि, मोह सँ बहरामल नीर सँ द्रवित कए देलनि अछि, श्वास सँ सुखा देलनि अछि, गद्गद वाणी सँ कष्टना-सागर मे फेकि देलनि अछि, ओ पुनः अपन विषय सँ तँ आगि मे राखि देलनि अछि ॥७॥

तावत् फुलबाड़ीक लतीक भोज मे तर्कत छियनि । (भूमिकेँ) निश्चयते छोड़ि केँ प्रिया चलि गेलीहि ! सँ हुनक ड्यौड़िअहि पर जाइत छी । (फेरि भूमि केँ) ई प्रियाक आवासक दोआरि धिक आ ई ठंढइ सपचारक लेल व्याकुल सुमुखी धिकीहि । तावत् हिन^{५७} कहि पुछैत छियनि । सुमुखि ! प्रियाक की समाचार ?

सुमुखी—(प्रवेश कए) उवेह । पहिने अनायासे बसन्तोत्सव प्राप्त छल, आव भाग्यदोषे^{५८} कम भए गेल ।

श्रीकृष्णः—प्रियायाः परिजनस्यापि वाणी शर्कध । विशेषेण कथय ।

सुमुखी— (नाट रागे^{५०} गीतम्—११)

कि कहव माधव ! तनिक विशेषे । अपसहु तनु धनि पाव कलेसे ॥
अपनुक आनम आरसि हेरो । चानक भरमे काप कत बेरी ॥
भरमहु निअ कर उर पर आनी । परसे^{५१} तरसे^{५२} सरसीरुह जानी ॥
चिकुर निकर निअ नयन निहारी । जलधरजाल जानि हिय हारी ।
अपन वंचन पिकरेव अनुमाने । हरि हरि तेहु परि तेजय पराने ॥
माधव ! आवहु करिअ समधाने । सुपुष्प निठुर न^{५३} रह्य निधाने ॥
सुमति उभापति भन परमाने । माहेसरि देइ हिन्दूपति जाने ॥

ता निवेदेमि देइ देवागमन । [तन्निवेदयामि देव्यै देवागमनम् ।]

श्रीकृष्णः—(सवांसम्) सुमुखि ! तथा विधेयं वक्ताज्ञापयति मां देवी ।
(सुमुखी निष्क्रान्ता)

श्रीकृष्ण—प्रियाक सैवक-चर्माक बोल टेहे अछि । विशेषरूपे^{५४} कहइ ।

सुमुखी— (नाट-राग मे गीतम्)—११

विशेसे=विशेष हालत । तनु=देह सौ । आरसि=अना मे ।
चानक भरम=चन्द्रमाक भूम । निअ कर=अपन हाथ । उर=
छाती । परसे तरस=स्पर्श सौ डराइत । सरसीरुह=कमल ।
चिकुर-निकर=केश समूह । पिकरेव=कोइलीक स्वर । समधान
=समाधान ।

हौ देवक (कृष्णक) आगमन देवी के निवेदित करै छी ।

श्रीकृष्ण—(डराइत) सुमुखि ! से काज करिहइ जाहि सौ देवी हमरा हृदयक
काज जनावधि ।

(सुमुखी बहार भए जाइत छथि)

श्रीकृष्णः—तावज्जालमार्गेण प्रपश्यामि प्रियायाः कोपावस्थाम् । (तथा कृत्वा)
हा धिक् प्रमादः !! (श्लोकः)—

बद्ध्वा शुक्लपटेन भालमखिलं हित्वा हठाद् भूषणं
प्रस्वाप्तः परिशोष्य शोणमधरं ग्लानं च शाश्वत्स्वरम्^{६०} ।
सन्तापं शिशिरोपचारनिधैरवेदयन्ती तनोः
कोपान्भामभिषिञ्चतीव हृदयं व्यस्तं कदुष्णाश्रुभिः ॥६॥

(ततः प्रविशति यथोक्तरूपा सत्यभामा, तामववीजयन्ती सुमुखी च ।)

सुमुखी—देइ ! समस्तसिहि । [देवि ! समाश्वसिहि ।]

सत्यभामा—कि उण उवआरेहि । [कि पुनरुपचारैः ?]

(^{६१}सुमुखी सम्बोध्य श्रीकृष्णं प्रति उलहन्— गीतं गायति ।)

(कोलाव—रागे गीतम्—१२)

हरि^{६२} सओ^{६३} प्रेम आस कय लाओल, पाओल परिभव ठामे ।

जलधर छाहरि तर हमे^{६४}सुतसिहु^{६५}, आतप भेल परिनामे ॥

श्रीकृष्ण—तावत् सिङ्गको सौ प्रियाक समसायल अवस्थाके देखैत छी।(तहिना
कए) हाय रे हमर लापरवाही !

ओ (हमर प्रिया) उज्जर कपड़ा सौ सम्पूर्ण कपार के^{६६} बान्हि के,
गहना के^{६७} हठपूर्वक त्यागि के, स्वास सौ लाल लाल ठोर के^{६८} सुखाय
के^{६९} दुखभरल स्वर के^{७०} बढओने छथि (साश्वत्) । ठंढाक उपचार
सभ सौ शरीरक सन्ताप के^{७१} सूचित करैत कोय सौ हृदय-स्थित हमरा
गर्म गर्म नीर सौ जेग नहबैत होथि ॥६॥

(सखन पूर्वोक्त रूपमे सत्यभामा ओ हुनका हैकैत सुमुखी प्रवेश
करैत छथि ।)

सुमुखी—देवि ! धैर्य धइ ।

सत्यभामा—उपचार सभ सौ की ? (सुमुखीके^{७२} सम्बोधित कए श्रीकृष्णक प्रति
उलहनगीत गवैत छथि ।)

सखि हे । मन जनु करिअ मलाने ।

अपन करम फल हमे उपभोगब, तोहे^{६३} किअ तेजह पराने ॥ध्रुवम्॥

पुख-पिरिति रिति हुनि जजो विसरल,^{६४}तथिहु न हुनकर दोसे ।

कतेक जतन धरि जजो परिपालिअ, साप न मानस पोसे ॥

कवहु नेह पुनु नहि पागासब, केवल फल अपमाने ।

वेरि सहस दस अमिओ^{६५} भिजाविअ, कोमल न होअ पषाने ॥

गुरु उमापति भन,^{६६}पहु देव दरसन, मान होएत समधाने ९७ ।

सकल-नृपतिपति हिन्दूपति जिउ, महारानि^{९८} विरमाने ॥

अलं शव श्रीविअ-दुबल्लाआशेण । [अलं तावज्जीवित-दुबल्लाया-सेन ।]

(सत्यभामा ६६ कृष्णमधिकृत्य पुनः सुमुखी प्रति उपहासगीतं गायति ।)

(विभास-रागे गीतम्- १२)

७०सहस्र-पूर्ण-शशि, रहओ गगन बसि, देखओ^{७१} दशओ दिस दन्दा ।

भरि बरिसओ विस, बहओ दशओ दिस, मलय समीरन मन्दा ॥

कोलाव-राग मे गीत—१२

परिभव = अपमान । जलधर = मेघक । आसप = रोक । परिनामे = परि-
नाम (फल) । मलाने = मलान (दुखी) । रिति = रीति । अमिअ = अमृत ।
पषाने = पाषाण (पाथर) । परसन = प्रसन्न । अवसान = समाप्त । हिन्दूपति
जिउ = हिन्दूपतिजी । विरमाने = विशेष अनुरक्त ।

प्राणक हेतु ई दुबल प्रयास व्यर्थ थिक ।

(सत्यभामा कृष्णक विषयमे सुमुखीक प्रति उपहासगीतं गवैत छथि।)

विभास-राग मे गीत—१३

पूर्णशशि = पूर्णिमाक चन्द्रमा । गगन = आकाश । दन्दा = दन्त (सींचा-
मानी) । विस = विष । मलय-समीरन = मलयपर्वतक बसात । हिन = हीन ।

६३ - मिअ हा ग । ६४ - विसरल तइओ न हुनकर हा । ६५ - वेरि

सहस दस अमिअ हा ग । ६६ - गुरुउमापति हरि होएत परसन- हा ।

६७ - अवसाने हा । ६८ - मोहेसरि वेइ क । ६९ - (पत्तिक अभाव) - हा ।

७० - सहस पुनिमा शशि - क । ७१ - निशि-बासर देखो - क ।

साजनि । आव जीवन कोन काजे ।

पहु मोहि हिन कर, अपयश जग भर, सहस न पाबिअ लाजे ॥

॥ध्रुवम्॥

कोकिल अलिकुल, ७२कलरवे^{७३} आकुल, करओ दहओ दुहु काने ।

७४सिरिस-सुरभि जत, देह दहओ तत, हनओ मदन^{७५} सतवाने ॥

७६कवि उमापति भन, हरि होएत परसन, मान होएत समधाने ।

सकल-नृपतिपति हिन्दूपति जिउ, पटमहिषी विरमाने ॥

(इति मूर्च्छति ।)

श्रीकृष्ण— हा थिक् ॥ ईदृशी दशा ? सन्देहे^{७६} पासिता मया । तदुपसर्पाम्बे^{७७}
नाम् । (इत्युपसर्पति । सखी संजया निवार्य विज्ञापयित्वा चरणतलं
परामृशति ।)

सत्यभामा— (ससंजम्) सहि सुमुहि । अण्णारिसो ज्जेव अज्ज दे करस्पसो ।

॥ सखि सुमुखि । अम्मादुश एव अद्य ते करस्पसः । ॥ (नयने
उन्मील्य श्रीकृष्णं दृष्ट्वा अन्नगुण्य उपविशति ।)

अलिकुल = भोरक समूह । सतवाने = सेयो बाण । सिरिस-सुरभि = शिरीषक
फूलक सुगन्धि । मदन = कामदेव । हनओ = मारओ ।

(ई कहि मूर्च्छित होइत छथि) ।

श्रीकृष्ण— हाय ! एहन दशा मे जियाके सपस्थित कए बेल हम ! तखन हिनक
समीप जाइत छी । (ई कहि लग जाइत छथि । सखी के दशारा
सँ रोकि के निवेदन कए पाएर जैत छथि ।)

सत्यभामा— (होश मे आवि) सखि सुमुखि । आइ तोहर स्पर्श आने तरहक
लगैत अछि । (आँखि खोलि श्रीकृष्णके देखि धोष तानि
बैसैत छथि) ।

७२ - करम वेआकुल - हा ग । ७३ - सिरिस - क हा ग ।

७४ - सहओ - हा । ७५ - सुकवि उमापति हरि - क हा ग । ७६ - सन्देहे
(अभाव) - हा ।

श्रीकृष्णः - (बड़ाञ्जलिः) प्रिये ! प्रसीद मानिनि !

(मालव - रागे^{७७}मानिनीगीतम् - १४)

७७ओ मे मानिनि ॥ध्रुवमा॥

अरुणपुरुष दिशा^{७९}, बहुलि सगरि निशा^{८०}, गगन^{८१}मगन भेल चन्दा ।

८२मुँदि भेलि कुमुदिनि, तहअओ तोहर धनि, मुँदख मुख अरविन्दा ॥१॥

(एतस्मिन् अर्थे श्लोकः)

रश्मि रीलति कोमुदी, शशिनि कोमुदी हीपते

वदन्ति कलमन्ततः शृणु समन्ततः कुवकुटाः ।

पुरो दिगतिरोहिता परि तिरोहितास्तारकाः

कथं तव वरोह ! हे ! मुखसरोरहे मुद्रणम् ॥१॥

ओ मे मानिनि !

कमल वदन, कुवलय दुहु लोचन, अधर मधुरि निरमाने ।

सगर सरीर कुसुम तुअ सिरिजल, किए तुअ हृदय पषाने ॥२॥

श्रीकृष्ण - (कल जोरि) प्रिये ! प्रसन्न होउ मानिनि !

मालव-राग मे गीत - १४

अरुण = सूर्य । बहुलि = बहि रेल (बीतलि) । सगरि निशि = सम्पूर्ण राति । गगन = आकाश मे । कुमुदिनि = चन्द्रक भरत भेलापर कुमुदिनी स-कुचेल ओ सूर्यक उगला पर कमल फुलाइछ । अरविन्दा = कमल ॥१॥

(एहि पदक अर्थ मे श्लोक) -

कुमुदक (पानि मे फुलाइबला एक उज्जर फूलक) काशित क्षीण होइत अछि, चन्द्रमा मे प्रकाश कम भए रहल अछि, आखिर सबतरि सुर्गा वजैत अछि से सुनू, पूब दिश अत्यन्त लाल भए गेल, तारा सभ छुप्त भेल, तथापि हे वरोह (सुन्दर औषवाली) अहाँक मुँदखपी कमल मुनएले किएक अछि ?

७७ - मानिनी (अमाव) - हा ग । ७८ - (अमाव) - क हा । ७९ - दिशि - हा ग । ८० - निशि - हा ग । ८१ - गगन मलिन - हा । ८२ - मुनि - हा ग ।

(एतस्मिन् अर्थे श्लोकः)

आस्यं ते सरसीरुहेण रचितं, नीलोत्पलाभ्यां दृशी,

बन्धूकेन रदच्छदौ, तिलतरोः पुष्पेण नासापुटम् ।

इत्येवं विधिना विधाय कुसुमैः सर्वं वपुः कोमलं

कूरं सानसमश्मना पुनरिदं कस्माद्यकस्मात् कृतम् ॥१०॥

ओ मे मानिनि !

असकति कर कञ्चुण नहि परिहसि, हृदय हार भेल भारे ।

गिरिसम गरुअ मान नहि मुञ्चसि, अपरुख तुअ वेवहारे ॥३॥

(एतस्मिन् अर्थे श्लोकः)

कान्ते किं तव कञ्चुकं न कुचयो नो हस्तयोः कञ्चुणं

शोर्वन्धी बलयावलीमपि न दौर्बल्येन विन्यस्यसे ।

हारं भारमिवापधारयसि चेदेवं गुहं भेषवद्

मानं मानिनि ! किं न मुञ्चसि मनाक् तं भावमावेदय ॥११॥

ओ मे मानिनि !

अवगुन परिहरि हरषि हेर धनि, मानक अवधि बिहाने ।

हिमगिरि कूमरि चरण हृदय धरि, सुमति उमापति भाने ॥४॥

कमल वदन = कमल सँ मुँहक निरमाने = निर्माण भेल अछि । कुवलय = कुमुदिनी सँ । मधुरि = माधुरी फल सँ । पषाने = पाषाण = पाथर ॥२॥

(एहि पदक अर्थ मे श्लोक) -

अहाँक मुँह (आस्य) कमल सँ बनल अछि, नील कमल सँ दूत आँखि, मधुरीक फल सँ (बन्धूकेन) दूत ठोर, तिलक फूल सँ नाक बनल अछि - एहि तरहें फूलहि सँ सम्पूर्ण देह कोमल बनाए ई निष्ठुर मन पाथर सँ एकाएक कोना बनाओल गेल ? ॥१०॥

असकति = असक्ति (आवृत्त सँ) । परिहसि = पहिरैत छी । गरुअ = भारी । मुञ्चसि = छोड़ैत छी । अपरुख = अपूर्व ॥३॥

(एहि पदक अर्थ मे श्लोक) -

प्रिये ! क्षम्यतामयमेको ममापराधः । अथवा-

(केदार-रागे गीतम्—१४)

माननि ! मानह जओ मोर दोस^{५४} साति करह वरुन करह रोस^{५५} ॥
 भौह कमल बिलोकन वान । वेधह विधुमुखि ! कय समधान ॥
 पीन पयोधर गिरिवर साधि । बाहु फांस धनि ! वर मोहि बांधि ॥
 ५६ की परिनति भय परसनि होहि । भूषण चरण-कमल देहे मोहि ॥
 सुमति उमापतिभन परमान । जगमाता देइ हिन्दूपति जान^{५७} ॥

(ततः) सत्यभामा प्रणम्य उत्थाय श्रीकृष्णः तां प्रति विलासगीतं गायति ।)

हे सुन्दरि ! अहाँक स्तन पर वरुन किएक नहि अछि, हाथ में कमल ओ बाँहिलपी लत्ती में सोनाक चड़ीक (बलय) पाँनी सेहो कमजोरीक कारणे नहि सज्जैत छी, हार (मोतीमाला) के भार जकां बुर्रैत छी, तँ एहि तरहें स्मर पर्वत सनक भारी मान के थोड़बो किएक नहि छोड़ैत छी ? हे माननि ! ताहि आशय के प्रकाशित कर ॥११॥

अवगुन = दोषके । परिहरि = छेड़िके । हेन = देखु । मानक अवधि बिहाने = मान करवाक समय भोरे तक रहैछ । हिमगिरि कुम्भरि = पार्वतीगङ्गा

प्रिये ! हमर एकटा एहि अपराध के क्षमा कर । अथवा—

केदार-राग में गीत—१५

शास्ति = शासन । रोस = तामस । पीन = पुष्ट । पयोधर-गिरिवर साधि = स्तनरूपी पहाड़ में साधिके । कोप-विरस = तामस के शास्त कए । परसनि = प्रसन्ना । भूषण = गहनाक रूप में अपन चरण-कमल दएह ।

(तखन सत्यभामा के प्रणाम कए उठि कृष्ण हुनका प्रति विलासगीत गवैत छथि) ।

५३ - (पंक्ति अभाव) - ख ग । ५४ - दोस - ख । ५५ - ख । (सकल चरणक अन्त्य गुरु) शास्ति करिअ वरुन करिअ रोस । ५६ - कोप प्रणय - ख । ५७ - माहेसरि वेह बस पुर अभिमाने - क । ५८ - सत्यभामा - (प्रणम्य उत्थाय) - (केदार रागे - गीतसं० - १७) - ख ग ।

(गीतम्—१६)

५९ तोहे धनि ! राजकुमारी, कुसुमहुँ तह सुकुमारी, वरनारी लो ॥
 नयन देहे जल डारी, मोहि वर हलह निहारी, करे मारी लो ॥
 तोहे मोहि हिरमनिहारी, अभिजा-भरलि जनि हारी, भय मारी लो ॥
 उमानाथे रिति परचारी, तुअ बस भेलहु बिचारी, परचारी लो ।
 हिन्दूपति जिउ जाने, महारानि विरमाने, विद्यमाने लो ॥
 सत्यभामा—(श्रीकृष्ण प्रति)—

(केदार-रागे गीतम्—१७)

साहि अवसर ताहिठाम । माधव ! किए तोहे लेल मोर नाम ॥
 आव कि करव परकार । माधव ! अपयश भरल संसार ॥
 सबहु पाओल अवकास । माधव ! जग भरि भेल उपहास ॥
 कोने परि सखिसभे साथ माधव ! उपर करव हम साथ ॥
 जाहि देखि हसलिहुँ काल्हि । माधव ! से आवे^{६०} करति करतालि ।
 ६१ परम करम मोर वाम । माधव ! सकल^{६२} तकर परिनाम ॥
 सुमति उमापति भान । माधव ! सुपहु करव समधान ।
 हिन्दूपति जिउ जान । माधव ! माहेसरि देइ विरमान ॥

(इति सूच्छति ।)

गीत—१६

कुसुमहुँ तह = फूलहुँ री अधिक । अभिजा = अमृत ।
 सत्यभामा—(श्रीकृष्णक प्रति)।

केदार-राग में गीत—१७

तहि अवसर = गीतसं० १०क बाद । परकार = उपाय । अवकाश = अवसर (उपहास करवाक) । करतालि = थपड़ी (हुँसी उड़ाओत) । वाम = विपरीत

५९ - (अभाव) - ख ग । ६० - आवे = वेति - ख ।

६१ - परम - ख । ६२ - सकल सनिक - ख ।

श्रीकृष्णः—(उत्थाप्य) प्रिये ! समाश्वासिहि, समाश्वासिहि ।
सत्यभामा—(आश्वास्य) अज्जउत्त ! आसासो बि मे^{१३} लज्जाअरो । [आर्य-
पुत्र ! आश्वासोपि मे लज्जाकरः ।]

श्रीकृष्णः—प्रिये ! प्रसीद । स्फुटमाज्जाय । कथं ते मानः^{१४} समाघातव्यः ?

भुवनं समये दयादृग्गन्तः

त्वयि, युक्तो मयि ते दयादृग्गन्तः ।

भवती न विना परास्तभावः

कुपितायां त्वयि मे परास्तभावः ॥१२

(श्री^{१५} कृष्णः सत्यभामां प्रति गीतं गायति—)

(गीतम्—१८)

६१केशरि तिलक कयल निरमान । चाँद कुमुद लय पूजल काम ॥

धने धने !! तुअ अनुरूप सिनेह^{१६}, सुन्दरि ॥ध्रुवम्॥

समधान ॥ समाधान । हिन्दू पतिभिज्ज = हिन्दूपतिजी। (सुच्छित होइत छथि।)

श्री कृष्ण—(ऊठि केँ) प्रिये ! मोन धीर कर ।

सत्यभामा—(शान्त भए) आर्यपुत्र ! आश्वासनो हमरा लेल लज्जाजनक थिक।

श्री कृष्ण—प्रिये ! प्रसन्न होइ । साफ साफ आज्ञा दिअ । कोना अहाँक मानक
समाधान होइत ।

अहाँक रहला पर दयादृष्टिक हृदयबला हम संसार केँ शान्त करैत छी,
अतः हमरा प्रति अहाँक दयादृष्टिक छोड़ (कृपाकटाक्ष) उचित थिक । अहाँक
विना हम परास्त नहि भए सकैछ छी (अर्थात् अहीँ राँ सँ परास्त होइत
छी), किन्तु अहाँक तमसएला पर हमरा दोसरक (अन्य नायिकाक) विषय
मे भाव अस्त भए जाइछ ॥१२॥

(श्रीकृष्ण सत्यभामाक प्रति गीत गवैत छथि—)

गीत—१८

केशरि ॥ केशर जकर रंग पिरोछ होइछ । चाँद ॥ चन्द्रमाकेँ । धने ॥
धन्य । अलक ॥ केश मे । नखतक ॥ नखतक, ताराक । बेनी ॥ जुट्टी । विरधि

६२ मल्लज्जाअरो ख । ६४ ममः । ६५ (पत्तिक अभाव) ख । ६६ (गीतक
अभाव) ख । ६७ तुअ रूप मन अनुरूप सुन्दरी क ।

अलक अलक मुकुतावलि काँति । जनि जलधर तर नखतक पाँति ॥
बेनी विरधि सीस फुल देल । जनि फणिपति सिर मणि उमि गेल ॥
बेसरि मोति अलक मुखइन्दु । उमगि अमिञ्ज-रस गर जनि बिन्दु ॥
६३पदक-हार कुच-सिर पर टारि । मुखशशि हेरि मेरु छिठि बारि ॥
उरवसि रलिक उमापति भान । लखिमा देइ पति ई रस जान ॥

सत्यभामा—(सुमुखीमधिकृत्य^{१७} कृष्णं प्रति) —

(मल्लार^{१८}-रागे गीतम्—१९)

माधव । करहु हमर समधाने । देहे^{१९} मोहि पारिजात तर दाने ॥
एहिखन तोरित करहु परधाने^{२०} । नहि तज्यो^{२१} हमर अवस अवसाने ॥
एहि पर हमर पुरत अभिमाने । हम^{२२} तह सहि नहि होअ अपमाने ॥
भुमति उमापति मन परमाने । पटमहिपी देइ हिन्दूपति जाने ॥

श्रीकृष्णः—(दीवारिकं प्रति^{२३}) धर्मदास दीवारिक ! देवीगृहान्नाशमन्त्रानय ।
(नेपथ्ये—यथाशा राजाम् ।)

= बनाए । फणिपति = सर्पराजक । बेसरि = नाकक भूषण मे मोती कलकैत
उमैत अछि जे मुखरूपी चन्द्रमा जेना उछलि केँ अमृतक बिन्दु चूअबैत हो।
सत्यभामा—(सुमुखी केँ कहैत कृष्णक प्रति) —

मल्लार-रागमे गीत - १९

समधाने = समाधान । तोरित = तुरत परधाने = प्रस्थान । अवस = अव-
स्य । अवसान = अन्त (मृत्यु) । हम तह = हमरासँ वा हेम तह = बर्क समान ।

श्रीकृष्ण - धर्मदास दीवारिक ! देवीक (कविमणीक) घर सँ नगर केँ एतए
बजाए लाबह ।

(नेपथ्य मे- राजाक जे आज्ञा ।)

६८ (पत्तिक अभाव) ग । ७६ (पत्तिक अभाव) ख ।

१ (पत्तिक अभाव) ख । २ देह ख ग । ३ पवित करहु परधाने ख ।

४ तह ख । ५ हेमत हमहि ख । ६ दीवारिकप्रति (अभाव) ख ।

नारदः— (प्रविश्य) अनुजानीहि मां पुरन्दरपुरगमनाय ।

श्रीकृष्णः—एवं भवता मङ्गलसा पुरन्दरो वाच्यः—

(श्लोकवद्ध* नारदहस्तेन श्रीकृष्णः पुरन्दरं प्रति आत्मवाक् प्रेक्षयति ।)

पुरन्दर ! प्रेषय पारिजातं पश्यन्तु वध्वस्तव साभिलाषाः ।

पुलोमकन्याकुचकुङ्कुमाक्तं^{१०} भिनत्तु मा शाङ्गं शरस्तबोरः ॥१३॥

(नारदं प्रति) शीघ्रं प्रत्यागम्यताम्^{११} ।

नारदः— तथा । (इति निष्क्रान्तः ।)

श्रीकृष्णः— धर्मदास ! प्रातर्गतवा घनवज्रं ब्रूहि, सज्जीभवतु भवानमराधिय,

समराय । अभ्यदपि, सुभद्रा प्रियाश्वासनाय प्रेषणीया ।

(नेपथ्ये—यथा देवाज्ञा ।)

नारद - (प्रवेश कर) इन्द्रक नगर जएवाक हमरा आज्ञा देल जाए ।

श्रीकृष्ण - अपने हमर समाद इन्द्रके एहिरूपे कहबे भू-

(श्लोकवद्ध अपन उक्ति नारदक हाथे इन्द्रक प्रति पठवैत छथि) ..
हे इन्द्र ! पारिजात पठाउ । साहि लेल अकण्ठित अहाँक भावहु लोकनि
(श्रीकृष्णक स्त्रीसभ) देखथ । पुलोमाक कन्या (शची = इन्द्रक पत्नी) क स्त-
नक कुंकुम सँ लिप्त अहाँक छातीकेँ शाङ्गक (श्रीकृष्णक घनुषक) तीर जनु
वेधए (अर्थात् जँ पारिजात नहि पठाएव तँ छाती बेचल जाएन से जानब) ॥१३॥

(नारदक प्रति, भेट दए आएव ।)

नारद—बेस । (बहार भए गेलाह) ।

श्रीकृष्ण—धर्मदास ! भोरे जाए केँ अजु न केँ बहिहनु अहाँ इन्द्र, सँ मुद्धक

हेतु तैयार होइ । दोसरो बात, जे सुभद्रा केँ प्रियाक (सखभामाक)

आश्वासनक हेतु पठा दैथि ।

(नेपथ्यमे—जे सरकारक आज्ञा ।)

७ (पंक्तिअ अभाव) ख । ८ माझिलतं - क ख ग ।

६ (अभाव) ख ।

(ततः प्रविशति सुभद्रा)

सुभद्रा^{१२}—(सत्यभामां प्रति) सहि सखभामे ! समाससिद्धि, समाससिद्धि
अग्रणइरसदि दे मणुं अज्जो । [सखि सत्यभामे ! समाश्वासिहि,
समाश्वासिहि । अपनेष्यति ते मन्युम् आर्यः ।]

श्रीकृष्ण—कथं चिरामते नारदः ?

नारदः—(प्रविश्य कृष्णं प्रति)

यत्र मोहवशात् कृष्ण ! ब्रह्मा शम्भुश्च मुह्यते ११ ।

लोकेश-श्रीमदाश्वस्यं तत्र शकस्य का कथा ॥१४॥

परमनुग्रहीतव्यः श्रीकृष्णेन^{१३} मदापनोदेन ।

श्रीकृष्णः^{१४}—नारद ! कथय, कथय ।

नारदः—(उपसृत्य) श्रीकृष्ण ! इदं प्रवृत्तरितं पुरन्दरेण—

पारिजातदलं यावच्चतुर्विकाप्रेण विद्धयते १५ ।

तावत् कृष्ण ! विना युद्धं मया तुभ्यं न दीयते ॥१६॥

(तखन सुभद्रा प्रवेश करैत छथि)

सुभद्रा - (सत्यभामाक प्रति) सखि सत्यभामा ! स्थिर रहू, अहाँक कोपकेँ
आर्य दूर करताह ।

श्रीकृष्ण - नारद देरी किएक कए रहल छथि ?

नारद—(प्रवेश कर) जाहि श्रीकृष्णक लग ब्रह्मा ओ महादेव सेहो मोह सँ
अभकृतिश्च भए जाइत छथि तए तीन लोकक आधिपत्यक लक्ष्मीक
मद सँ अग्र भेल इन्द्रक तँ कखे कोन ? ॥१४॥

मुदा, मद हलाए केँ श्रीकृष्णक प्रति अनुग्रह करैव उचित छलन्हि ।
(लग जाए) श्रीकृष्ण ! इन्द्र ई उत्तर देलन्हि अछि—पारिजातक पातकेँ
जतबा मुद्रयाक मोक सँ वेधि सकैत छी तसबो अंश हे कृष्ण ! विनु युद्धे हम
अहाँकेँ नहि दए सकैत छी ॥१५॥

१० (सुभद्राक उक्तिअ अभाव) ख । ११ मुह्यते - क ख ग ।

१२ श्रीकृष्णो ख । १३ (अभाव) ख । १४ निश्चित क ।

श्रीकृष्णः—सहि अनुभवतु फलं नारद ! धैर्यस्य । अयमहमिदानीं मनसा
विहङ्गमराजम ह्वयामि । दक्ष क्षनञ्जय ! पारिजाततर्कं हरामि,
इन्द्रमदं चापवारयामि । प्रिये ! अनुजानीहि ।

सत्यभामा—किद्विजयो गियदुस्त, सिधं आणन्द-पडत्तिहरो पेसिदव्वो ।
[कृतकृत्यो निवर्त्तस्व । शीघ्रमानन्दप्रवृत्तिहरः प्रेषितव्यः ।]

श्रीकृष्णः—अयं नारदो निवेशयिष्यत्यागत्य कार्यसिद्धिम् ।

नारदः—उत्कण्ठते मे लोचनं भ्रातृपुत्र-सङ्गमदर्शनाय ।

(श्रीकृष्णो घनञ्जय-नारदाभ्यां समं पारिजातहरणाय निष्क्रान्तः ।)

सत्यभामा—सहि सुहृद् ! अवि नाम किदकओ अञ्जउत्तो भत्ति पडिणिवट्ठि-
स्सवि^{१५} ? [सखि सुभद्रे ! अपि नाम कृतकार्यं आर्यपुत्रो भटिति
प्रतिनिवर्तिष्यति ?]

सुभद्रा—अध इ ? [अध किम् ?]

सत्यभामा— (मालव-रागे गीतम्—२०)

प्रथमहि ओ रे,

कुसुम-रचित एक तलपटु, की अलपटु ।

धिरह-वेआकुल छल पटु ॥

श्रीकृष्ण - तखन नारद ! विमुख होएवाक फल भोगधु । इयेह हम एखन मनसँ
पक्षिराज (गरुड) केँ वअवैत छियन्हि । दक्ष (बुद्ध मे पटु) अजुन !
पारिजातक गाछकेँ हरण करैत छी । आ इन्द्रक मद केँ दूर करैत
छी । प्रिये ! आज्ञा दिअ ।

सत्यभामा—कर्त्तव्य पूर्ण कए धू । जल्दी आनन्दमय समाचार देनिहार केँ
पठाउ ।

श्रीकृष्ण—इयेह नारद आवि केँ कार्यसिद्धि क सचामार सुनओताह ।

नारद—हमर आखि भातिजलोकनिक युद्ध देखबा एए उत्कण्ठित अछि ।

(श्रीकृष्ण अजुन ओ नारदक संग पारिजात-हरणक हेतु प्रस्थान
कएल) ।

सत्यभामा—सखि सुभद्रे ! की आर्यपुत्र कार्यसिद्धि कए छटवए चुड़हाह ?

सुभद्रा—त आओर की ?

१५—पडिणिवट्ठिस्सवि—क हा ।

तन्हि^{१६} विनु ओ रे,

नयन बरिस^{१७} जलधर सन, की परसन ।

कतिखन देत विहि दरसन ॥

उपवन ओ रे,

पिक पञ्चम कर जनु सर, की अनुसर ।

मार मदन धरि^{१८} धनु-सर ॥

सुनु धनि ओ रे,

सुमति उमापति भन मत, की धन मत ।

सुपटु मिलत रस जनमत ॥

सहि सुहृद् ! वामं णक्षणं मे परिरूपुरदि । [सखि सुभद्रे !
वामं नयनं मे परिरूपुरति ।]

सुभद्रा सहि ! देख, नारदो संपत्तो । [सखि ! प्रेक्षस्व, नारदः संप्राप्तः ।]
नारदः—(प्रवेश्य) देवि ! विष्टया वर्षसे, जितं श्रीकृष्णेन, हृतश्च^{१९} पश्चात्
पारिजातसहः ।

सत्यभामा— (मालव-राग मे गीत)- २०

तलपटु = तल्प (ओछाओन) पर । अलपटु = अल्पटु (थोड़वो) । पटु =
प्रभु (पति) । परसन = प्रसन्न । विहि = विदाता । पिक = कोइली । सर =
स्वर । मार मदन = कामदेव मारैत छथि । (मार' पद मे श्लेष अछि जकर
(१) नारद ओ (२) कामदेव अर्थ होइछ । मदन शब्दक संग प्रयुक्त भेला सँ
पुनरुक्तवदाभास अलंकार भेल ॥

सखि सुभद्रे ! हमर वामो आँखि फडकैत अछि । (ई शुभक लक्षण
थिक) ।

सुभद्रा—सखि ! देख, नारद आवि भेलाह ।

नारद—(प्रवेश कए) देवि ! भाग्यक जोड़गरि छी । श्रीकृष्ण जितलाह,
पाछ पारिजातक गाछ हरण कए लेलन्हि ।

१६—तनि : हा । १७—बरसि—हा । १८—धनि—हा ग । १९—हृतः : हा ।

सत्यभामा—इदं वाच पारिजातस औच्छाहितं गेहं (इति हारं ददाति ।)
भञ्जं ! निवेदेहि समाशेन समरञ्जय वृत्तान्तो । [इदं तावत् पारि-
जातस्य औत्साहिकं गृहाण । भगवन् ! निवेदय समाशेन समर-
जयवृत्तान्तम् ।]

नारदः—अहो ! निर्वयं प्रहारः परस्परं भ्रातृपुत्राणाम् ॥

(वसन्त-रागे गीतम्—२१)

आ रे२० ॥

ऐरावत असवार पुरन्दर, धन-भूषण धनु हाथे ।

सहस्र तुरग चङ्चल धनुर्धर, तनय जयन्तक साथे ॥

आ रे२१ ॥ ध्रुवम् ॥

भाइ-भाइ रण भेल भयङ्कर, गजवर गरुड दुरन्ता ।

अचरज देख्य देवगण२२ आयल, गिरिस२३ गोरि परजन्ता ॥

सारंग-सर सुरपति उर वेधल, गाण्डिव-पाणि जयन्ता ।

ठामहि ठोर ठोकि विनतासुत, भांगल२४ दिगज दन्ता ॥

पारिजात तरु गरुड चढाओल, हरि करकमल उपाडि ।

सबकां शिव पुनु कयल समञ्जस, आयल मुदित मुरारि ॥

सत्यभामा— पहिले ई पारिजातक (पाक्षिक) इनाम लिअ । (हार दैत छथिन्ह) । भगवन् ! संक्षेप मे विजयक वृत्तान्त कहू ।

नारद— ओह ! अपन भातिज-लोकनिक निर्वय प्रहार केहन छल ॥

वसन्त-राग मे गीत— २१

पुरन्दर = इन्द्र । धन-भूषण = मेधक गहना । तुरग = घोड़ा । तनय जयन्तक = अपन पुत्र जयन्तक (इन्द्रक पुत्र जयन्त छलनिन्ह) । गजवर = ऐरावत हाथी ओ गरुड जविक वीरताक अन्त नहि, ताहि दुनू मे रण भेल । गिरिस गोरि परजन्ता = महादेव ओ गोरी पर्यन्त । सारंगसर = श्रीकृष्ण ।

२०—(अभाव) - हा ग । २१—(अभाव) - हा ग । २२ = देवगुनि - क । २३—

गिरि ही गिरिस - हा । २४—भांगल—हा ग ।

सकल-यवन-जन वर-दावानल, दशम देव अवतारा ।

सकल-नृपति-पति हिन्दूपति जिउ२५, सब रस जननिहारा ॥

(ततः प्रविशति सपारिजातो गरुडाखटः श्रीकृष्णः, अस्वाखटो धनञ्जयः ।

श्रीकृष्णः— मिथे ! गृह्यतामसं पारिजातसरः ।

धनञ्जयः—सखि सत्यभामे ! सम्प्रति सर्वासां मानवतीनां मूर्ध्नि विराजसे ।

यतः—

अयं रोगशोकादिकं तापयित्वाऽर्थिनां दर्शनात् सर्वमर्थं ददाति ।

स ते स्नेहसो माधवेनोपनीतो महापुण्यभूमिस्तरुः पारिजातः ॥१६॥

तदुत्तमीयताम् ।

सत्यभामा—(प्रणम्योत्थाय)—

(राजविजय—रागे गीतम्—२२)

जय जय पारिजात तराराज । पाओल पुरुष-पुने२६ दरसन आज ॥

सुरपति = इन्द्रक छाती केधिल । गाण्डिवपाणि = अर्जुन जयन्तक छाती केधल । विनतासुत = गरुड । समञ्जन = मेल । सकल-जन = सम्पूर्ण यवन रूपी जनक हेतु जनली आगि ।

(तखन पारिजात सहित गरुड पर चढ़ल श्रीकृष्ण ओ घोड़ा पर चढ़ल अर्जुन प्रवेश करैत छथि ।)

श्रीकृष्ण—सखि ! इमेह लिख पारिजातक गाछ ।

धनञ्जय—सखि सत्यभामे ! आव तँ एखन अहाँ मानवती सभक ऊपर शोभित भए रहलि छी । किएक तँ—

ई पारिजात रोग-शोक इत्यादि केँ नष्ट कए दर्शनमात्र सँ इच्छुक व्यक्ति केँ सभ वस्तु दैत अछि । ते महापुण्यक आश्रम पारिजातक गाछ अहाँ केँ स्नेहपूर्वक श्रीकृष्ण देलनि अछि ॥१६॥

तेँ गीत गाब ।

सत्यभामा—(प्रणाम कए ऊठि)

राजविजय—राग मे गीत— २२

पुरुष-पुन = पूर्वक (पहिलुका) पुण्य सँ । सर्वक भूषण = सर्वगक शोभा ।

२५—पति—हा । २६—पुन—हा ग ।

सरगक भूषण गुणक निवास । सुरद्वक^{२०} तोहेँ परिपूरल आस ॥
 सेवक सब तुअ दानव देवा । मानवे^{२१} जानव की तुअ सेवा ॥
 सुरपति निअ कर करथि किआरी । सची देखि सुरसरि-जल ढारी ॥
 सुमति उमागति भन पारमाने । माहेशरि देइ हिन्दूणति जाने ॥

नारदः—सत्यभामे ! जनासि ? पारिजाततटे दत्तमक्षयं भवति । तदारोपय-
 तामङ्गणे ।

श्रीकृष्णः—एवमस्तु ।

(इति सर्थे रोययति ।)

श्रीकृष्णः—धनञ्जय ! बहिरनुगम्य राजराजं विसर्जयिष्ये ॥

(ततस्तथा कृत्वा पद्भ्यामेव प्रविशतः ।)

सत्यभामा - नारद ! कि दिजो ? [नारद ! कि देणम् ?]

नारदः - प्रियः पदार्थः ।

सत्यभामा - सो को उण अज्जउत्तादो णणी ? [स कः पुनरार्यपुत्रादयः ?]

श्रीकृष्णः - प्रिये ! प्रभवसि मयि, देहि मां ब्रह्माणाम ।

(सत्यभामा लज्जते ।)

दानव देवा = देव ओ देवता सेवक अछि । निअ-कर = अपना हाथ । सची =
 हृदयक पत्नी सची । सुरसरि = गङ्गाक ॥

नारदः— सत्यभामे ! जनैत छी ? पारिजातक तर मे दान देल अक्षय होइत
 छैक । तेँ आऊन मे रोपू ।

श्रीकृष्णः— एहने होअओ । (सब केओ रोपैत छथि ।)

श्रीकृष्णः— अर्जुन ! बाहर जाए अरिआसि केँ कुशेर केँ बिदा कए आब ।

(तखन सहिना कए पएरहि दुनू गोटा- अर्जुन ओ श्रीकृष्ण प्रवेश
 करैत छथि) ।

सत्यभामा—नारद ! की दिअ ?

नारदः— प्रिय पदार्थः ।

सत्यभामा—ओ पदार्थ आर्यपुत्र सेँ आन कोन भए सकैछ ?

नारदः - कथं लज्जरी ?

गीर्वा मे गिरिसो दत्तः पीलोम्या च पुरन्दरः ।

तथा तटे तरोरस्य त्वया कृष्णः प्रदीयताम् ॥१७॥

सत्यभामा - (कुशादिकमावाय) अज्ज इत्यादि अकुण्डिक-अज्जउत्त-चरणभजन-
 कामा अज्जउत्तं नारदाय देमि । दक्षिणा च देमि । [अद्येत्यादि
 अकुण्डितार्थपुत्रचरणभजनकामा आर्यपुत्रं नारदाय ददे । दक्षिणां
 च ददे ।]

नारदः - स्वस्ति । सुभद्रे ! त्वया किन्न दीयते धनञ्जयः ?

धनञ्जयः - एवो भवतु । प्रभवति मयि श्रीकृष्णानुजा ।

सुभद्रा - (सलज्जं संकल्प्य ददाति ।)

नारदः - स्वस्ति । युवां मे दासी संवृत्ती ।

उभौ - किमधिकं स्यादधीष्टम् ?

नारदः—(सर्वम्) किङ्करी ! किं कारयामि ?

श्रीकृष्ण - प्रिये ! हमरा परअहाँ केँ अधिकार अछि । हमरा ब्रह्माणक लेल
 दान करू ।

सत्यभामा- (लजाइत छथि) ।

नारद-- किएक लजाइत छी ? हमरा गीरी देखनि महादेव, सची देखनि
 इन्द्र । तहिना अहाँ एहि गालक तर मे कृष्ण दिअ ।

सत्यभामा-- (कुश आदि लए) अद्य (आइ) इत्यादि अनवरत आर्यपुत्रक
 चरण-सेवाक कामना सँ आर्यपुत्र केँ नारदक हेतु दान करैत छी,
 दक्षिण सेहो दैत छी ।

नारद-- स्वस्ति । सुभद्रे ! अहाँ अर्जुन कियेक नहि दैत छी ?

धनञ्जय-- एहिना हो । श्रीकृष्णक छोटि बहिन (सुभद्रा) केँ हमरा पर
 अधिकार छन्हि ।

सुभद्रा (लजाइत संकल्प कएकेँ दैत छथिन्ह) ।

नारद- स्वस्ति । अहाँ दुनू (श्रीकृष्ण ओ अर्जुन) हमर दास भेलहुँ ।

दुनू— एहिसँ बेसी की नीक होएत ?

हलं विभर्तुं श्रीकृष्णः कुदालं च धनञ्जयः ।

द्वयो र्वास्मिन्महत्तमं भूमिष्वामि यथासुखम् ॥१८॥

चरणौ तावत् संवाहयतम् ।

उभौ—अनुग्रहोयमावधौ ।

नारदः—(स्वगतम्) एवमेतत् । अहो ब्रह्मण्यता लीला वा परमेश्वरस्य !!

(प्रकाशम्) केन वा विश्वम्भरस्य वृकोदरानुजस्य च दूर्यतामुदरम्?

भवतु-विक्रोतव्यौ । (उच्चैः) कोऽरि दासकृता वर्तते ?

सुभद्रा—सहि सच्चभामे ! जावं रुक्मिणी न किणइ दावं किणिहि अज्ज ।

[सखि सत्यभामे ! यावद् रुक्मिणी न कीर्णाति तावत् क्रीणोहि आर्यम् ।]

सत्यभामा—(सलज्जम्) एता किणामि । किं मुल्लं, सुवर्णभारसहस्रं, मणिरत्नराशि वा, नवविधयो वा, त्रयो लोका वा ? [एता क्रीणे ।

किं मुल्लं, सुवर्णभारसहस्रं, मणिरत्नराशि वा, नवविधयो वा, त्रयो लोका वा ?]

नारद—(गर्व सँ) दुनू दास ! कोन काज करावी ?

श्रीकृष्ण हर घरधु ओ अर्जुन कोदारि । अथवा दुनूक कान्ह पर चडि के जेना मन होएत घुमब ॥१८॥

तावत् दुनू गाटए पएर दयाउ ।

दुनू—ई तँ हमरा दुनू पर कृपा भेल ।

नारद—(मनहि मन) ठीक । अहो परमेश्वरक ब्राह्मणक प्रति स्नेह वा लीला ! (प्रकाश=सुनाय) अथवा के एहि विश्वम्भरक (संसारक पेट भरयवलाक) ओ वृकोदरक (हुदर सन पेटवलाक) छोट भाए अर्जुनक पेट भरए ? अच्छा, दुनू के बेचि ली । (जोरसँ) कयो दास मोल लेब ?

सुभद्रा—सखि सत्यभामे ! यावत् रुक्मिणी नहि किनेत छथि तावत् आर्यके (श्रीकृष्ण के) कीनि लिअ ।

सत्यभामा—(लजाइत) इयेह किनेत छी । की दास अछि ? सोनाक हजार भार, मणि ओ रत्नक ढेर, नवो निधि आ कि तीनू लोक ?

नारदः—(कर्षी पिधाय) शास्त पापम् !!

सत्यभामा—सच्चं भाण, जेण पच्चओ होइ । [सत्यं भाण, येन प्रत्ययो भवति ।]

नारदः—धेनुं देहि ।

सत्यभामा—देमि । सहि सहइ । तुमपि धनञ्जयं किणिहि, जावं होवई न जाणइ । [ददे । सखि सुभद्रे ! त्वमपि धनञ्जयं क्रीणस्व, यावद् द्रौपदी न जानाति ।]

सुभद्रा—अहं पि धेनुं देमि । [अहमपि धेनुं ददे ।]

नारदः—उन्मुक्ती तौ । सत्यभामे देवि ! सम्पूर्णस्ते बहुमानः ।

सत्यभामा—भवदो आसिसो पसादेण । [भवत आधिपा प्रसादेन ।]

नारदः—किमतः परमिच्छसि ?

(सर्वे गच्छन्ति ।)

(ललित-रामे गीतम्—१३)

जलधर समय करथु जलदाने । भरलि रहथु धरणी धनधाने ॥

धरमे प्रजा परिपालथु राजा । चारु१९ वरन करथु निजा३० काजा ॥

नारद—(दुनू कान मुनि पापक शांति हो (नारायण नारायण !!))

सत्यभामा—सत्ते कहू, जाहि सँ विश्वास होअए ।

नारद—गाए दिअ ।

सत्यभामा—देत छी । सखि सुभद्रे ! अहो अर्जुन के कीनि लिअ, यावत् द्रौपदी नहि दुःखि ।

सुभद्रा—हमहूँ गाए देत छी ।

नारद—दुनू के छोड़ि देलियनि । सत्यभामे देवि ! अहाँक बड़ पैध मान पूरा भेल ।

सत्यभामा—अपनेक आशीर्वादक प्रसाद सँ ।

नारद—एकर बाद आव की चाहैत छी ?

(सर्वकेशी गयेन छथि)

२१-चारि-श । ३०-विज-श ।

वाभन वेद खेद नहि आवे । साधुक सन्धि कुजन जनु पावे ॥
 पिशुन पाव जनु नृपतिक काने । गुण बुझि भूप करथु सम्माने ॥
 चिरे जीवथु हिन्दूपति देओ । गुण कीरति गाबधि ११ सब केओ ॥
 १२ सुमति उमापति भन परमाने । माहेसरि देइ हिन्दूपति जाने ॥

[भरत-वाक्यम्]

उर्वी शह्येन गुर्वी विलसतु सुखिनः सन्तु सर्वे च लोकाः ।
 क्षोणीपालः समस्ताद् दिशन् बहुगुणं मन्त्रमिच्छा वसूनि ।
 साधूनां सन्निवासः सह पिशुनजनैरेकलोकेऽपि मा भूद्
 आशुद्रान्तं कवीनां भूमतु भगवती भारती भङ्गिभेदैः ॥११॥

इहि महामहोपाध्याय-कविपण्डितमुख्य-श्रीमदुमापति-विरचितं
 पारिजातहरणाख्यं नाटकं समाप्तम् ॥

(छलित-राग मे- गीत- १३)

घरणी = पृथ्वी । घरमे = धर्म ही । चारु वरन = ब्राह्मण, क्षत्रिय,
 वैश्य, सूद्र । खेद = कष्ट । सन्धि = सम्पर्क । कुजन = कुर्जन
 पिशुन = चुगिला । नृपतिक = राजाक ॥

[नाट्य—निर्देशक कल्याण-कामना]

पृथ्वी धान्य से परिपूर्ण रहओ, सब लोक सुखी होअओ, राजा सबतरहे
 धनक परामर्श कएके बहुत गुणयान् के अवकाश (बड़बाक मीका) देखु ।
 साधुव्यक्तिक निवास कुर्जनक संग एकलोकहु मे नहि हो । कविलोकनिक
 भगवती वाणी उक्तिवैचित्र्य से सूद्र पर्यन्त भूमण करथ ॥११॥

इति म० म० कविरण्डितमुख्य-सुमति श्री उमापति उपाध्यायक
 बनाओल पारिजातहरणनाटक सम्पूर्ण भेल ॥

११--गाबधि-स । १२--(पाँतीक अभाव)-क सा ।



परिशिष्ट - १

उमापतिक स्फुट-काव्य-संग्रह

एखन धरि उमापतिक काव्यकृति मे पारिजातहरण से अतिरिक्त किछु
 गीत ओ श्लोक विभिन्न स्रोत से उपलब्ध होइत अछि । एहि सगहिक एकत्र
 संकलन होँ रामदेव झा अपन १९५० ई० मे मैथिली अकादमी पटना से प्रका-
 शित 'उमापति' नामक पोथी मे कयने छथि । ताहि संग्रह मे गीत सं०—१०
 से उमापतिक नहि थिकनि, कारण, ई गीत रमापतिक 'रुक्मिणी परिणय' नाट-
 कक छठम अंक मे भेटैत अछि । स्मरणीय थिक जे रमापति अभिनव-सुमति
 छलाह । उक्त संग्रहक सकल गीत लय 'कतिपय गीतक भ्रष्ट पाठक' उद्धार कय
 प्रस्तुत संग्रह तैयार भेल अछि । एहि संग्रहक गीत सं०—१ एक प्राचीन पोथीसे
 मिलाय संशोधित भेल अछि । दुहु संग्रहक गीत सं० विवरणः—

'उमापति'	प्रस्तुत सं०
१	१
२	१
३	१४
४	४
५	७
६	४
७	१
८	६
९	८
१०	४
११	१
१२	१०
१३	११
१४	१२, १३

॥ ताराक गीत—दरवारी कान्हूरा ॥

राङ्गरि ! शरण धएल हम तोर ।

कुकरम देखि अधिक यदि कोपित, की करताह यम मोर ॥ध्रु०॥

शिवतरु सुरतरु [तर] शिव ऊपर, हास वास अतिधोर ।

सहस दिवस-मणि, चान कोटि जनि, तनु दुति करत इजोर ॥

सोहे खर्ग अति गर्वक पूरनि, लम्बोदर जगदम्बे ।

मनुज नागवर सकल सुरासुर, सबकां तुहि अवलम्बे ॥

वाम हाथ माथ अति कोमल, दहिन खड्गकर कांती ।

पांच कपाल भाल अति राजित, श्रीहन्दीवर कांती ॥

शिव-शव-आसनि ! पास योगिनि-गण, परिहन बाघरि छाला ।

रक्त रक्त लहलह कर रसना, नव यौवन मुण्डमाला ॥

फणि नेउर-केउर, फणि कङ्कण, हृदय हार फणिराजे ।

सह रसना फणि युग, फणि केउर, फणी हार, फणि छाजे ॥

चौदिस केरब, बाव मुण्डावलि, चिता अग्नि सन गेहे ।

तीनि नयन मणिमय सब भूषण, नव जलधर सम देहे ॥

शिव सनकादि आदि ब्रह्मादिक, नर मुनि धरत धेआन ।

त्रिभुवन तारिणि, नरक निवारिणि, सुमति उमापति भान ॥

—मैथिलभक्तिप्रकाश—गीत सं०—३६, पृ०—१४

(मैथिली गीत रत्नावली पृ०—२६, ३०)

॥ छिन्नमस्ताक गीत—तोड़ी ॥

जय जय जय परचण्डि चण्डिके ! आदिशक्ति तुअ चण्डी ।

ब्रह्मा शिव हरि, सकल भुवन भरि, तुअ सिरिजल ब्रह्मण्डी ॥

अष्टदल कमल उपर रवि-मण्डल, ता पर त्रिगुण सुरेखी ।

ता पर रति-विपरित मनमथ कर, ता पर तुअ पद पेखी ॥

लहलह रसन दसन अतिचञ्चल, विकट वदन विकराला ।

पीन पयोधर ऊपर राजित, उरग-हार मुण्डमाला ॥

उत्तम-अङ्ग वह वाम-पाणि कए, दहिन कलप धरि कांती ।

निज गल उछिल लिधुर मधुरी मधु, पीबि जिविअ भल भांती ॥

योगिनि-युगल पास दुइ पोसल, अरुण तरुण घनश्यामा ।

तीनि नयन तुअ जोति जगत भरि, सहस्र-भानु-अभिरामा ॥

भाव-भक्ति बर दिअ परमेश्वरि ! भुक्ति मुक्ति यरदाने ।

हिमगिरि-कूमरि-चरण हृदय धरि, सुमति उमापति भाने ॥

—मैथिलभक्तिप्रकाश—गीत सं०—३६, पृ०—१५ ।

भ्रमरान्योक्ति

कमलिनि सङ्गे रङ्गे दिवस गमाओल

कुमुदिनि निशि विसराम ।

भमर ! पुछिअ तोहि, सरूप कहह मोहि

अधिक प्रीति कोन ठाम ॥

अशन कुसुम रज, भमर ! सुरभि भज

दुहु विरचए एक साति ।

एक, दिन बान्धि निरोधि धरति तोहि

दोसरि बान्धति पुनु राति ॥

सौरभ लोभ मुगुध मधुकर मन

जाए न केतकि - पास ।

काँट वेधत अङ्ग, रस नहि परसङ्ग

पाओव परम उपहास ॥

रस बुझ ते बुल, रसिक सवहु फुल

अधिक प्रेम गुणवान ।

छत्रपति भूप रसिक रस-बिन्दक

सुमति उमापति भान ॥

---मैथिली गीतरत्नावली ।

४

कृष्ण-सौन्दर्य

बेरि बेरि विरचधि, विधि विधु मण्डल

हरिमुख सरि नहि होए ।

नयन निरखि निधि, नलिन मलिन होअ

नलिनी धन यस गोए ।

हरि एक जना मोर सएह धना ॥ध्रु०॥

कनक-किरिट पुर, केउर नेउर

कङ्कण किङ्किणि पांती ।

इन्द्रनील मनि, विसकरमे जानि

कसल कनक कत भांती ॥

शङ्ख सदरसन गदा सरोरुह

शारङ्ग पीअर वासे ।

जनि शशि सूरज, मेरु उगल कुज

इन्द्रधनु तलित अकासे ॥

मणि मुनि धरण जुगुत, मुहुतावलि

मिलित ललित वनमाला ।

जनि सागर सित सागर सरसिज

हंसक पांति विशाला ॥

धन भादव धन मास किसन पछ

धन आठमि तिथि आजै ।

धन मधुरा, धन देवकि वसुदेव

जाहि जनमल यदुराजे ॥

कोटिओ काम उषाम न पावए

हो धरनए कधि जानै ।

सब परिहरि हरिचरण हृदय धरि

सुमति उमापति भाने ॥

५

शम्भु-नटा

जय शम्भु नटा, जय शम्भु नटा ।

हँसि हर हेरधि गौरि निकटा ॥ध्रु०॥

भृङ्गी मधुर मृदङ्ग बजावधि

नन्दी निपुण भालि भमटा ।

ताल तमोरा लए चुन गावधि

सङ्गहि नारद मुनि बिपटा ॥

जान-कला सँ चूइल अमित्र-रस

तेहि [मञ्जी] जिउल अजिन-लपटा ।

गौरि सिंह देखि दुरहि पडाइलि

लाज कओन सहजहि लडटा ॥

भमइत भानु जटा लय भाँपल

बमकि छठए जनि जलद-घटा ।

गङ्गा तरङ्ग भूमि भीजल अति

नयन नमक जनि बिजुरि छटा ॥

हँसधि सखी सभ दए करताली

ताल धरधि जनि सहस्र घटा ।

सानेद भए धर दिखओ दिगम्बर ।

सुमति उमापति भिनति गोटा ॥

---(मैथिली पद्य संग्रह-प्र०० रमानाथ झा)

६

विरहिणी

सखि हे ! कि कहब निज ओथाने ।

सुपहु कहल जये, रोस कएल तवे

कर सुनल बुहु काने ॥ध्रु०॥

आएल गमन बेरि, नयन नीर भरि
 मोहि किछु कहिओ न भेला ।
 एहन करम-हिनि, हम सनि के धनि
 करसौ परस-मनि गेला ॥
 ई हम जनितहुँ, एहन निठूर पहु
 कुच कञ्चन-गिरि साधि ।
 कोशल कर धए, बाहु-लता लए
 बिड़ कए रखितहुँ बांधि ॥
 पिअ सुमरिअ जबे, किअ न मरिअ तबे
 बुझि पड़ हृदय पपाने ।
 हिमगिरि कूमरि, वरण हृदय धरि
 सुमति उमापति भाने ॥

(—प्राचीन-गीत - प्रो० रमानाथशा)

७

उचिती

देखलहुँ हर वर आज रे । रति पति केँ होअ लाज रे ॥
 पुरुष पुष्प फल आज रे । शङ्कर हमर समाज रे ॥
 करधि हमर घर वास रे । पुरधि सकल मोर आस रे ॥
 ओ निभुवन-पति राज रे । हम निरधन धन साज रे ॥
 हमर बहुत अभिरोष रे । क्षमा करधि सब दोष रे ॥
 सुमति उमापति भान रे । शिव जग के नहि जान रे ॥

(डॉ० रामदेव झा— 'उमापति' पृ०-५२)

८

प्रथम-मिलन

पहिलहि भेलि धनि प्रियतम पासे ।
 हृदय अधिक होअ लाज तरासे ॥
 भबै थिर रहू धनि आंगहु न डोल ।
 हेम-मुरति सन मुखहु न बोल ॥

करै दूह धए पहु पास वैसाए ।
 तओ पए रहू धनि बदन ससाए ॥
 मुख हेरि ताकि भभर भाषि लेल ।
 अञ्जुम सरि कए कमलमुखि लेल ॥
 सुमति उमापति दुहे मन अनुमति ।
 अभिनव रस बुझ हिन्दुपति तरपति ॥

(डॉ० रामदेव झा— 'उमापति'- पृ०-५५)

९

सौन्दर्य

आजु देखलि हमे ओ मे रसनी ।
 सारथ ससिमुखि गति गजगमनी ॥
 भउँह कमान नयन सर वामा ।
 दुहु कर धनु धए मारलि कामा ॥
 कुच जुग सिरिफल-भर नत देहा ।
 कमल फुलल जनि धिजुरी रेहा ॥
 सोमल लोम-लता तगु देहा ।
 कनक आकृति जनि [शोभ] मसि-रेहा ॥
 विहंसि विहंसि मुख करए अनन्दा ।
 वसुधा बरिस सुधारस चन्दा ॥
 वेदन-मथन उमापति^१ भाने ।
 रतिपति-पति मिलु पुरुषक दाने ॥

(डॉ० रामदेव झा— 'उमापति'- पृ०-५६)

१— ई गीत विश्वापतिक भविता मे 'विश्वापति गीत संग्रह' हस्तलिखित ग्रन्थ संख्या-१६७८ मिथिला संस्कृत शोध संस्थान दरभङ्गा मे तालवत्र संख्या-५ पर बहुत पाठान्तर रूप मे अस्ति । ओहि मे एहि गीतक पौती सं० ७, ८, ९, ११, १२ भिन्न अछि । भविताक पद अछि—

भने विश्वापति सुनु देव जानु ।

गुनमति नामरि रस दय आनु ॥

१०

मनाओन

कहह सख कलवति !, देवह दिवस कत खेद ।
 मन बुझि अबुस जकी छह, अवहु करह परिछेद ॥
 बिमुख न कर मुख हिमकर, समुख अबैते हमे हेरि ।
 नयना जनु बिछड़ावह, देह मोरि दिछिहुक मेरि ॥
 कोशले करह गतागत, पुनु पुनु मोरि समाज ।
 उकुतिहि गुपुत बेकत होअ, आवे कत करह बेआज ॥
 संसय कर जिव डगमग बिहुँसिहु देह बिसवास ।
 गावधि सुमति उमापति, हिमनिवि कूमरि दास ॥

(कवियेखर पुष्पाञ्जलि—खण्ड १, पृ० १६२)

११

॥ प्रेम-विभोर ॥

(बनछी—रागे)

तोहे हमे समुचित प्रेम ।
 रतने जडित जनि हेम ॥

भावनि ! ॥ प्र० ॥

तोहे जनि ! जल, हमे मीन ।
 एक जीवन, तन भीन ॥
 हमे पाओस, तोहे नीप ।
 हमे गृह, तोहे मणि-दीप ॥
 हमे कैरव, तोहे चन्द ।
 हमे हिअ, तोहहि अनन्द ॥
 हमे अलि, तोहे अरविन्द ।
 अघर मधुर मकरन्द ॥
 सुमति उमापति भान ।
 हिन्दूपति रस जान ॥

(कवियेखर पुष्पाञ्जलि—खण्ड १, पृ० १६२)

१२

॥ चोरहरण ॥

इस पाँच सखि ब्रजनारी । जत छलि मेकुल वारी ॥
 सबहु कएल एक संगे । करइत कत विधि रंगे ॥
 बजइत मधु-रस बानी । चललि जमुन दह पानी ॥

छन्दः—घए उतारिअ चीर अभरन, घसलि जमुना घाए ओ ।

कदम डारि मुरारि बैसल, छेल चीर चोराए ओ ॥

जमुना-जल भेल केली । सखि सब बाहरि भेली ।
 परिहन अपन न पाओल । तखना कान्ह बुझाओल ॥

छन्दः—कहहि सखि सओ कान्ह कपटी, चीर कह केओ पाव ओ ।

चीर तोहर अहीर लूटल, लए दहोदिस घाव ओ ॥

रोसे कहलि सब गोरी । 'साति करत भूप तोरी' ॥

'तुनह सुनह तोहे गोरी । कि करत भूपति मोरी' ॥

छन्दः—हारि सब ब्रजनारि देखल, अब न आन उपाय ओ ।

लाजे आकुल कएल दिनती, अवस हाथ छटाए ओ ॥

'माधव होथु सहाए । बिब मोरा देखु छोड़ाए' ॥

उमानाथ कवि गावए । कृष्णकथा परथावए ॥

(डॉ० रामदेव झा—'उमापति' पृ० १९)

१३

बाल-चरित्र

इस पाँच सखि ब्रजनारी । दहि-दुध बेचनिहारी ॥

बालचरित्र कृष्ण केली । गर्वत जमुन तिर गेली ॥

छन्दः—जाए जमुना-तीर सब सखि, ठाढ़ि भेलि ब्रजनागरी ।

नील पट तन, साजि भूषन, रूप जीवन आगरी ॥

चाट बैसल नव दानी । सुन्दर सारङ्गपानी ॥

धचम बोलधि हँसी हाँसी । मधुर बजावधि बाँसी ॥

छन्दः— स्थाय सओ हँसि दुछ गोआरिन, 'घाट तोहे' घटवार ओ ।
जाएव मधुपुर गोरस बेचए, करह जमुना पार ओ ॥
सेह सुनि कहु स्थायसुन्दर, धए लटुरि भेल ठाढ़ ओ ।
रोकि राख गोआरनी सब, दान माळए गाढ़ ओ ॥

हाक बैए हलु काहें । 'होअह पार कए दाने ॥
'दहि-दुध किछु बर छेह ॥ तोरित पार कए देहें ॥

छन्दः— 'नीत मधुपुर गोरस बेचिअ, कबहु लाभ न दान ओ ।
कोन नगर तोहे' वसह दानी, कहह के तुअ जान ओ' ॥
'दान दए दए जाह नित दिन, भल न तोहर गेआन ओ' ॥
'सुनह तिहुर गोपाल मन दए, भल न तोहर टेव ओ ।
एहि जग बसि के न जानए पार गेले' लेव ओ' ॥
'भए गेल दुपहरि बेरी । कखन जाएव गृह केरी ॥
गरअ पड़ल किअ आजै । कहिन कहैतें होअ लाजै' ॥

छन्दः— 'आज सब कुल-लाज परिहरि, जाह मधुरा बाट ओ ।
नन्दसुत हमे प्रबल दानी, रहिअ जमुना घाट ओ ॥
सुनह नारि गोआरि ! मन दए, कहह सत्त सख ओ ।
गर्व कए नहि दान राखिअ, देखि बालक रूप ओ ॥
कसक करव विषसे । उधरव जत जदुपमे ॥
करव भक्त निज काजै । उग्रसेन देव राजे ॥

छन्दः— बघल पुतना अओ उधारल जमल-अजुन दास ओ ।
हुनि अबे, बक मारि घालल, करव कंस-विनास ओ ॥
धुसध निज जन अबल कएकहु, देल निश्चल राज ओ ।
एहि महीतल जत भगत-जन, करव सब मिलि काज ओ ॥
सकुचित भेलि सबे नारी । देखि चरित्र बनमाली ॥
'लेह आलिङ्गन दाने । अओर अधर मधुपाने ॥

छन्दः— राबिका सओ प्रीति बाढ़ल, काहें घर करहार ओ ।
बललि हरपित नारि मधुपुर, कैए जमुना पार ओ ॥

ननुआँ से नन्दकुमार । जसोमति प्राण अघारे ॥
समानाथ कवि गावए । कृष्णकथा परथावए ॥
— (डॉ० रामदेव झा— 'उमापति'- पृ० ५६ सँ ६१) ।

१४

नटेश्वरी

आएल नटनेसरि लेल परबेस ।
अभरत तेजि धए जोगिन भेस ॥
बघछात्र कछिनि गायल प्रिमहार ।
कछनी पहिरि माता भाउरि लेल ।
नेपुर सबद भेदिनि उड़ि गेल ॥
सती भवानी गुन अनुमान ।
सुमति उमापति होउ समधान ॥

— 'उमापति'- पृ० ५१



श्लोकः

- (१) यत्र ब्रह्मसमुद्भवः, कमलया यस्मिन् निवासः कृतः,
पाणौ यत् परमेश्वरेण परम-प्रेम्णा समारोपितम् ।
भो भोः ! कुन्द-कदम्ब-केतकि-जपाशुष्पाणि ! वः प्रार्थये
तत् पद्मं कुसुमं, वयञ्च कुसुमान्येवं न कार्यं मनः ॥

— उमानाथ-वण्डितस्य ।

(विद्याकरसहस्रकम्-श्लोकसं० ६४) ।

अर्थ— हे हे कुन्द कदम्ब केतकी ओ ओड़ूल फूल सभ ! तोहरा सभ सँ प्रार्थना
करैत छियहू जे जतय ब्रह्माक उत्पत्ति भेल, जाहि पर लक्ष्मी निवास
कयलनि, जकरा परमेश्वर विष्णु अत्यन्त प्रेम सँ हाथ मे धारण
कयलनि— स कमलौ फूले थिक आ हमरो लोकनि फूले थिकहुँ— एहन
मन नहि करह ॥

- (२) अज्ञास्तरन्ति पारं, विज्ञा विज्ञाय द्राङ् निमज्जन्ति ।
कथय कलावति ! केयं, तव नयन-तरङ्गिणी-रीतिः ॥

— उमानाथ-वण्डितस्य ।

(विद्याकरसहस्रकम्-श्लोकसं० ४५२) ।

अर्थ— हे कलावती ! तोहर आँखिखूबी तदीक ई कोन तरङ्गक स्वभाव छह
जे विनु बुझनिहार लोक तँ पास भए जाइत छथि, मुदा, बुझनिहार ही
बुझितहि भट वय डुबिए जाइत छथि ?— से कहह ॥